ॐ

वनिता-बुद्धि-विलास

लेखिका
श्रीमती रानी साहिबा
रियासत दियरा।

शरद चन्द्र पूनौ निरखि जल निधि बीचि हुलास,
त्यौं उमगावत तियन हिय वनिता-बुद्धि-विलास।

प्रकाशक
पं० सुदर्शनार्य्य, बी० ए०,
'गृहलक्ष्मी'-कार्य्यालय,
प्रयाग।
१९७० विक्रमाब्द।

पं० सुदर्शनाचार्य्य, बी० ए० के प्रबन्ध से
'सुदर्शन' प्रेस, प्रयागमें मुद्रित,
सन् १९१३ ई०।

पुस्तक मिलने का पता—

(१) श्रीमती रानी साहिबा,
रियासत दियरा,
जि० सुल्तानपुर।

(२) मैनेजर, 'गृहलक्ष्मी'-कार्य्यालय,
प्रयाग।

भूमिका

शंकर-चरण-दिनेश, मम हिय-वारिज-कोश को।
विकसित करै हमेश, अज्ञानज-तम दूर करि॥

श्रीमान् विद्यानिधान क्षत्रिय-कुल-कैरव-चन्द्र आनन्द-कन्द दया-शील-सम्पन्न मेरे सर्वस्व के स्वामी प्राणेश्वर राजा रुद्रप्रतापसिंह साहिब जू की चरण रज से अपने मन-मुकुर को निर्मल करके अपने थोड़े से अनुभव, थोड़े से ज्ञान का फल यह छोटी सी लेखमाला सब भारतीया बहिनों के कर-कमलों में अर्पण करती हूँ। मैं एक साधारण देहाती स्त्री हूँ। सत्संग, सत्समाज, उच्चशिक्षा आदि के लाभों से विहीन हूँ, किन्तु बहिनों की सेवा की इच्छा से जो कुछ घर गृहस्थी के बीच की बातें मालूम हैं वह सब निवेदन करती हूँ। आशा है कि सब बहिनें इसे पढ़ कर यदि इसमें भली बात पावेंगी तो उससे

अवश्य लाभ उठावेंगी, उसके अनुसार आचरण करके सुख पावेंगी। इससे पहले मैं एक छोटी सी पुस्तक "भगिनी-मिलन" आपकी भेंट कर चुकी हूँ। अब यह "वनिता-बुद्धि-विलास" भी आपकी भेंट है। इसमें स्त्रियों के लौकिक और पारलौकिक व्यवहार की बातें सरल हिन्दी भाषा में दी दी गयी हैं।

मेरी प्यारी बहिनो! हमारी दशा दिनोदिन बिगड़ती ही जा रही है। हम लोगों में बहुतेरियों को तो विद्या और अनुभव की हवा तक नहीं लगने पाती। प्राचीन समय की देवियों के चरित पढ़ कर हम तो लाज से गड़ जाती हैं कि उनकी ही सन्तान होकर हम ऐसी गयी गुजरी हैं कि उनके सामने हमारी दशा पशुओं के समान है। उनके आदर्श को लेकर, उनके जीवन चरित से सीख कर हमें अपने जीवन को सुधारना चाहिए, अच्छी और योग्य संतान उत्पन्न कर भारतवर्ष को उसके पहले के ऊँचे पद पर पहुँचा देना चाहिए।

इस छोटी सी पुस्तक में इन कुरीतियो का भी वर्णन किया गया है जिनके उठा देने की बड़ी आवश्यकता है और जिनसे हमारे देश की और हमारी दुर्दशा हो रही है:—

१—विवाह के समय भद्दी भद्दी गालियोँ का रवाज ।

२—पति से व्यर्थ परदे का रवाज ।

३—संतानोँ से विद्याभ्यास न कराना बल्कि उनका आवश्यकता से अधिक लांड़ करना ।

४—स्वयं विद्या न पढ़ना और अज्ञान को हीं उत्तम जानना ।

५—परस्पर द्वेष करना ।

६—घर के कांम में सुघराई और सफाई न होना ।

७—पतिसेवा रूपी सच्ची उपासना को छोड़ कर भूत-प्रेत इत्यादि में विश्वास करना ।

८—गृह-स्वामी से चोरी करना ।

९—रसोई बनाना न आना और बनाने में आलस्य करना।

१०—सम्बन्धियों तथा अतिथियों के साथ अच्छे व्यवहार में कमी करना।

११—सांसारिक सम्पत्ति और रूप पर घमंड करना।

१२—अपने देश के अच्छी रहन सहन के ढंग न जानना।

प्यारी बहिनो! इन कुरीतियों को दूर कर देने से ही हमारा काम पूरा न होगा। हमें वे उपाय भी करने चाहिए जिनसे हमारी बढ़ती हो, हम संसार में उन्नति लाभ करें और परलोक में भी हमें अपने किये का पछतावा न हो। वे उपाय संक्षेप से ये हैं कि हमको पहिले तो चंचलता कम करके अपनी बात की, अपने इरादे की पक्की होनी चाहिये। आज हमने किसी कुरीति को त्यागने का प्रण किया तो हमें चाहिए कि प्राण भी चले जायँ तो भी अपने प्रण से न हटें। यदि हमने कोई अच्छा गुण ग्रहण करने का

निश्चय किया तो तनमन धन से दृढ़ होकर उसको पूरा करके ही छोड़े। स्त्रियों की हठ संसार प्रसिद्ध है। कैसी अच्छी बात हो यदि उसी हठ से हम अच्छे काम लें, और गुणों को पाने के लिए इस अवगुण को भी गुण बना डालें। इस हठ का ऐसा सदुपयोग करने से क्या हमने पारस का काम नहीं किया?* दूसरे हमें अपने ज्ञान और अनुभव को विद्या से, औरों की शिक्षा से, सलाह से, बढ़ाना चाहिए और अच्छे उपदेशों पर चलना चाहिए। तीसरे हमें अपनी गृहस्थी बड़ी चतुराई से सँभालनी चाहिए और फ़ज़ूल खर्ची को रोक कर अच्छे कामों में धन को लगाना चाहिए।

बहिनो, अब संसार में ऐसी उन्नति हो रही है, ऐसा विद्या-प्रचार हो रहा है कि हमारा सोते रहना

* "लज्जां गुणौघजननीं जननीमिवस्वा
मत्यन्तशुद्धहृदयामनुवर्त्तमानाम्
तेजस्विनः सुखमसूनपि संत्यजन्ति
सत्यव्रतव्यसनिनो न पुनः प्रतिज्ञाम्" (भर्तृहरिः)
"प्राण जाइ बरु, बचन न जाई"—(तुलसी)

मर जाने के ही बराबर है। अब हमें जाग कर होश संभालना चाहिए, औरों को जगाना चाहिए, भारत को जागृत करके उन्नति के मार्ग में चलाना चाहिए। सो, हे बहिनो! अब आँखें खोलो, देखो हमारी क्या क्या दुर्दशाएँ हो रही हैं। सावधान हो जाओ, कोई काम हो विचार कर दृढ़ता से करो। अविद्या की गहरी नींद से आप जागो और औरों को जगाओ, भारत के दुःख मिटाओ, सुमाता कहाओ, देर न लगाओ।

जब आप का उत्साह पिता, भ्राता, ससुर और पति देवता देखेंगे तब आप लोगों के लिए वे लोग आप उन्नति की सीढ़ियाँ तय्यार कर देंगे। जब तक आप अपने बूते उन्नति के काम में न लग जावेंगी, दूसरे लोग कभी सहारा न देंगे।

उठो अब देवियो! जग कर, जगाओ देश को सारे,
बहुत दिन हो गये सोते, मिटाओ क्लेश को सारे।
हरो सब भार भारत का, पुरुष का काम कर हलका,
तभी तो जन्म लेना है सफल, इस भारतस्थल का।

हुईं पहले बहुत सी देवियाँ इस देश मैं ऐसी,
न पाधोगी मुक़ाबिल मैं कहीं इस मुल्क की जैसी ।
तुम्हीं सोने की खानैं हो, नहीं तुम बल्कि पारस हो,
तुम्हारे होते धन की क्या कमी है प्यारे भारत को ।
विविध विद्या कला सीखो सिखाओ वंश को अपने,
प्रचारो देश मैं अपने सुधारो देश को अपने ।
तुम्हारे बिन उठे, हरगिज़ नहीं उठने का है भारत,
बड़ी तदबीर मरदौं की हैं होती जा रही ग़ारत ॥

यदि पुस्तक मैं कोई त्रुटि रह गयी हो तो सुयोग्य बहिनैं सूचित करैं, जिसमैं दूसरी बार की छपाई मैं वह दूर कर दी जावे ।

आप सब बहिनौं की शुभचिन्तिका

रानो दियरा ।



ईश्वर-प्रार्थना

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेतिवेदान्तिनो
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्त्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्म्मेति मीमांसकाः
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥

(अनुवाद)

शैव जाहि शिव शिव कहि ध्यावैं,
वेदान्ती जेहि ब्रह्म कहैं ।
बौद्ध बुद्ध, नैयायिक कर्त्ता,
कहि प्रमाण की ओट गहैं ॥
मीमांसक जेहि कर्म्म बखानैं,
अर्हत नाम जैन लेवैं ।
सोइ त्रिलोकेश्वर परमेश्वर,
वांछित फल हम को देवैं ॥

आरत टेर सुनौ करुनानिधि,
दीनन के जुपै होत सहाई।
बेगि निवास करौ हिय अन्तर,
बुद्धि-विकास बढ़ै अधिकाई ॥
जो वनिता तम कूप पड़ीं,
तेहि देहु विवेक को भानु लखाई।
त्यागि कुपंथ सुपंथ चलैं,
हिय उन्नति की रुचि राखँ सदाई ॥

त्रोटक छन्द

प्रभु दीन दयालु दया करिये,
तिय हिन्दुन के दुःख को हरिये।
गुण ज्ञान के लेश प्रकाश नहीं,
मद मोह तमावृत है सब ही ॥
परिवार सगे नहिँ बोलत हैं,
सब स्वारथ-साधक डोलत हैं।
पर को अपवाद सदैव करें,
पति छाँड़ि के ओभन द्वार रर ॥

भइ साँझ तिया सिसु गोद लिए,
मसजीत फुँकावँ, प्रतीत किये।
व्रत आदिक सन्तति हेत कर,
टोटके अरु टोनेहु पै निभरैँ॥
पट-भूषण की इक चाह रही,
मरजादहु की परवाह नहीँ।
दिन रैन परस्पर द्वेष ठनी,
मन-मेलहु के मन-मैल गनी॥
सतसंग कथा कर नाम नहीँ,
नहिँ वेद पुरान की बात कहीँ।
जेहि देस मेँ उत्तम नारि हतीँ,
विदुषी व सती रणवीर्य्यवती॥
तहँ हैँ पशु के सम मोह-मती,
कहवाय रहीँ सगरो युवती।
गयो धर्म्म पतिव्रत, प्रेम सुधा,
गई जो गुरु लोगन की शरधा॥
बल बुद्धि विकास की चाह हमैँ,
जगनायक दीजै निबाह हम।

चरन भान श्रीमान के हृदय कमल धरि ध्यान,
कछु विचार जाहिर करत, हरन तिमिर अज्ञान।
सरद चन्द पूनौ निरखि वन-निधि वीचि हुलास,
त्यौं उमगावत तियन हिय वनिता-बुद्धि-विलास॥



विषय-सूची

वनिता-बुद्धि-विलास

स्त्रधर्म

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्म्मो भयावहः" —गीता
निधन भल बरु धरम अपने, परधरम भय-खानि।

प्यारी बहिनो! धर्म्म का प्रश्न बड़ा कठिन समझा जाता है। धर्म्म पर संसार में नित्य जितने झगड़े होते हैं उनसे ही जाहिर है कि क़िसी जाति का क्या धर्म्म होना चाहिए यह निश्चय कर लेना टेढ़ी खीर है। परन्तु आज जिस धर्म्म की चर्चा मैं करती हूँ, मुझे आशा है कि उससे सारी स्त्री-ज़ाति एकमत है। किसीको उस धर्म्म में भेद नहीं है। हमारी जाति के मुख्य धर्म्म तीन हैं—

(१) पतिव्रत धर्म्म।
(२) ईश्वर आराधना।
(३) अच्छा व्यवहार (सद्व्यवहार)

(१) पातिव्रत

इनमें पातिव्रत धर्म्म का दरजा सबसे ऊँचा है, इसी को सबने मुख्य माना है। तुलसीदास जी ने एक ही चौपाई में इसे भली भाँति कह दिया है:—

"एकै धरमु, एक व्रत, नेमा,
काय बचन मन पति-पद-प्रेमा।"

मतलब यह है कि मनसा, वाचा, कर्म्मणा, पति के अनुकूल, उसकी मरजी से, चलना, उसके सुख में सुखी और उसके तनिक से दुःख से भी बहुत दुःखी होना और उसके दुःख को मिटाने का उपाय सोचना और तन, मन, धन से उसे दूर करने का यत्न करना यह हमारा सहज धर्म्म है। यद्यपि स्त्री अपने पति की अर्द्धांगिनी है, पति और पत्नी एक प्राण दो देह हैं, परन्तु स्त्री को सदा उचित है कि अपने को कम समझे और अपने प्यारे पति की सेवा अपने प्राणों से अधिक करे। सच्चा प्रेम, सच्चा अनुराग, ऐसा ही कराता है और यही अपना उत्तम कर्तव्य है। पति देवता चाहें अपने से पत्नी को अधिक प्यार करें, यह उनके

प्रम, उनके धर्म्म की बात है। अगर वे अपने धर्म्म में चूक भी जायँ तो भी हमें अपने धर्म्म से न हटना चाहिए। एक पति का ही ध्यान, उन्हीं के गुणों की चर्चा रात दिन करने से चित्त एकाग्र हो जाता है।

हमारे देश में योग का बड़ा महत्व है और उस की महिमा कौन नहीं जानता। परलोक-साधन का बहुत बड़ा उपाय योग समझा जाता है, परन्तु योग-साधन बहुधा वे ही करते हैं जो घर-गृहस्थी के कामों से छुट्टी पा जाते हैं। प्यारी बहनो, वही योग साधन हमको परम सुलभ है, बल्कि वह हमारा आवश्यक धर्म्म है। हमें उसके लिए घर-गृहस्थी के कामों से छुट्टी नहीं लेनी है, वरन् उनमें लगे रहने में ही हमारा वह साधन हो सकता है। पतंजलि ऋषि ने कहा है—"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" अर्थात् चित्त को चारों ओर से बटोर कर, रोक कर, एकाग्र करना, एक ही पदार्थ पर लगाना, यही योग है। इस से जाहिर है कि हम अपने चित्त को एकाग्र कर अपने प्यारे पति के ही ध्यान में लगावें, सोते, बैठते, उठते, खाते, पीते, काम काज करते, निरन्तर अपने प्राणेश्वर पति के ही

पूज्य चरणों का ध्यान रक्खें तो हमें योग सहज ही में सिद्ध हो जाय। यही तो बात है कि जो फल बड़े बड़े तपस्वियों को अनेक कष्ट उठा कर नहीं मिले वे साधारण पतिव्रता सतियों को सहज ही मिल गये। सती आप लोक और परलोक सुधारती है, साथ ही साथ पति को भी वही लाभ पहुँचाती है। इस देश के इतिहास ऐसी महा महिमावाली पवित्र देवियों के चरित से भरे पड़े हैं। पतिव्रता सती के सामने शत्रु भी सिर झुकाते थे, काल भी हार मान जाता था और पति के संग जल-जाना तो उनके लिए मानों कोई बात ही न थी।

हमारा देश यदि सतियों की पवित्र भूमि कहा जाय तो उचित है क्योंकि संसार में और कहीं न ऐसी पतिप्राणा देवियाँ हुईं और न हैं। अब भी, ऐसी बिगड़ी दशा में भी, भारत वर्ष में जैसी महादेवियाँ मौजूद हैं, कहीं और नहीं पायी जा सकतीं। परन्तु हम को खेद के साथ कहना पड़ता है कि हम अपने पुराने आदर्श से बहुत गिर गयी हैं। इस लिये, सौभाग्यवती बहिनो, हमें चाहिए कि फिर उसी आदर्श को जीवित करें, पति

की ऐसी भक्ति करें कि वही योग प्राप्त हो जाय, और दोनो लोक में दम्पती सुख से रहें और आत्मा को सच्ची शान्ति मिले।

परन्तु ऐसा कोई न समझे कि पातिव्रत धर्म्म यहाँ हीं समाप्त हो जाता है। पति के सम्बन्धी, पति के मित्र, छोटे बड़े, सभी अपने सम्बन्धी हुए। यदि उन्हें सुख होगा तो पति भी सुखी होंगे। उनके दुःख से पति को दुःख होगा। इस लिए पति के बड़ों को और बराबरी वालों को अपना बड़ा जाने और उनकी भी सेवा, आदर-सत्कार करे। पति से छोटों को अपना छोटा सम्बन्धी जान उनको प्यार करे, सुखी रक्खे। पति के माता-पिता को अपने माता-पिता से भी बढ़ कर जाने। यह सब इस लिए कि पत्नी जब पति की अर्द्धांगिनी हुई तो ये सब ठीक ठीक पत्नी के वैसे ही पूज्य और प्यारे हुए। यदि इन्हें पराया समझा तो फिर पति पत्नी में भेद हो गया, फिर भक्ति और प्रेम और पतिव्रत धर्म कहाँ रहा?

जब हमारे देश में पतिव्रत धर्म था उस समय कैसे कैसे वीर पुत्र उत्पन्न होते थे जिन की कीर्ति अब तक

छायी हुई है। और जब से यह अमूल्य धर्म हम लोगोँ के हाथ से जाने लगा तब से हम लोगोँ की क्या क्या दुर्दशाएं हो रही हैँ। विधर्मियोँ के समय मेँ माता-पिता कन्या को जन्मते ही मार डालते थे और बाज़े म्लेच्छ हाकिम जब ख़बर पाते थे कि कोई सुन्दरी कन्या किसी के घर मेँ है तो ज़बरदस्ती चढ़ाई करके छीन ले जाते थे। अंगरेज़ी राज्य को धन्यवाद है कि उन आपत्तियोँ से हमारी जाति बची हुई है। परन्तु अब भी हम लोगोँ की दशा सुधरी नही है। हम अपने धर्म से गिरती जाती हैँ, जिस से यह देश दिन दिन अधोगति को प्राप्त होता जाता है। परन्तु इस मेँ हमारी ही भूल है हमारा ही दोष है।

गज़ल

आज क्योँ भारत की यह आरत दशा हम देखते,
सुख के बदले फँस बिपत मेँ रंज औ' ग़म देखते।
जब से फटकारा धरम को इसने अपने पास से,
हाथ धो बैठा है भावी अभ्युदय की आस से।
धर्म्म औ' विद्या के बल से पूज्य था यह विश्व मेँ,
हाय, इन दोनोँ को इसने खो दिया आलस्य मेँ।

एक दिन वह था कि भारत में सती की धूम थी,
पति जुदाई में चिता पर जल के होती धूम थी।
इस पतिव्रत धर्म से थे पुत्र होते बीरवर,
देश उन्नति में प्रखर, दृढ़ पैज, पोढ़े, धीर नर।
हिन्द के गौरव को हरगिज हाथ से देते न थे,
दूसरे देशों से कुछ इहसाँ कभी लेते न थे।
ऐ हमारी प्यारी बहिनो अब भी यदि कुछ ध्यान दो,
दुख सहो पर धर्म्म की तुम घोषणा पर कान दो।
मन में अपने खौफ़ को, आलस्य को, आने न दो,
दृढ़ प्रतिज्ञा की प्रथा हरगिज़ कभी जाने न दो।
तो बड़ाई होयगी दुहुँ लोक में तेरी, बहिन,
डूबते भारत को यदि लेगी बचा मेरी बहिन॥

परमात्मा ने पति पत्नी को संग संग संसार समुद्र से पार होने के लिए रचा है, हमारे धार्मिक ग्रंथ ऐसा ही कहते हैं। यदि स्त्री पुरुष अलग अलग संसार से पार होना चाहें तो दोनों के लिए बहुत कठिन है।

सवैया

फिर चारिहु धाम करै व्रत कोटि कहा बहु तीरथ तोय पिये तैं। जप होम करै अनगंत कछू न सरै तऊ

गंगं नहान किये तैं ॥ कह धेनु को दान सहस्रन बार, तुला गज हेम करोर दिये तैं। "रघुवंश कुमारी" विना पति सेये वृथा सब जात विचार हिये तैं ॥

(२) ईश्वर आराधना

स्त्रियों का दूसरा धर्म ईश्वर आराधना है। इस में पति की आज्ञा मुख्य है। पति देवता का जो मत हो उसके ही अनुकूल चलना फिर भी पत्नी का परम कर्त्तव्य है। नित्य ईश्वर प्रार्थना, पवित्रता से सन्ध्या पूजा करनी प्रत्येक स्त्री का धर्म है। अगर किसी कारण से पति का मन अधर्म्म को ओर झुका हुआ पाया जाय तो धीरे धीरे उनका मन अच्छे मार्ग की ओर, ईश्वर भक्ति की ओर, लगावे। यदि सौभाग्य से पति ईश्वर भक्त हो तब तो क्या कहना है। वह आपही पत्नी को उपासना के मार्ग में लगावेगा। परमेश्वर की उपासना मनुष्य मात्र के लिए परम कल्याण के देने वाली और पतिव्रत के बाद स्त्री के लिए तो सबसे आवश्यक काम है। इस दुःख से भरे संसारमें ईश्वर की उपासना ही बड़े अवलम्ब का कारण होती है। आज

कल अकालमृत्यु से अपने प्यारे से प्यारे का वियोग सहना पड़ता है । जो ईश्वर का भरोसा न हो तो मनुष्य को आधार ही क्या है। इससे यह न समझना चाहिए कि केवल प्रार्थना, भजन वा पूजा से ही उपासना होगयी। परमात्मा की सृष्टि में अनेक दीन दुखिये हैं उनकी सहायता करना अकेले में बैठ कर भजन करने से भी कहीं बढ़ कर है। इसमें सन्देह नहीं कि

"कर्म्म प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करै सो तस फल चाखा॥"

और जो दुःखी हैं वे अपने किये का फलभोग रहे हैं पर उनके दुःख में काम आना यह ऐसा बड़ा उपकार है कि उनका तो दुःख घटताही है किन्तु अपना आराम भी साथ ही साथ बन जाता है। यदि अपने ही स्वार्थ और सुख में समय बिताना मनुष्य का धर्म्म हो तो वह पशु-पक्षियों से कौनसी बात में श्रेष्ठ रहा ? बहुत से मूर्ख ईश्वर को ही नहीं मानते किन्तु जो सब पतियों के पति और सब प्राणों के प्राण को ही नहीं मानता उसके समान बे-समझ कौन होगा ?

परोपकार आदि उपासना के रूपों की जो चर्चा की गयी है उससे कोई यह न समझे कि अपने काम सधने के लिए किसी पर इहसान करना भी उपकार है। याद रहे कि उपकार वही हो सकता है जिसमें फल वा बदला पाने की इच्छा न हो, जो केवल दूसरे के सुख के लिए किया गया हो, जिसमें कोई स्वार्थ न हो। इस तरह के कर्म्म को "निष्काम" कहते हैं। ईश्वर की उपासना करके, प्रार्थना करके, कभी कुछ माँगना नहीं चाहिए-यदि माँगे भी तो स्वयं ईश्वर में ही प्रीत, अच्छे मार्गों में चलना, पति-पत्नी में अविचल प्रेम आदि जिसमें कोई नीच सांसारिक स्वार्थ न हो। जो उपासना औरों को ठगने, भक्ता वा धर्म्मिष्ठा बनने, वा केवल दिखावे के लिए की जाती है, वह उपासना नहीं बल्कि पाखंड और अपने ही आपे को धोखा देना है। इससे औरा की हानि कम है, पर अपनी ही अधिक है। रोग, पीड़ा, मरना, बुढ़ापा, दारिद्र आदि पीड़ा हम नित्य इन्हीं आँखों देखते ह इतने पर भी हम आत्मा को धोखा दें और सच्ची उपासना न करें तो कैसे खेद की बात है! इस लिए हमें

चाहिये कि देखने में तो संसार में ही लगी रहें, कुछ हरज नहीं, किन्तु सचमुच मन ईश्वर में ही लवलीन रहे।

जगते रहु छत्तीस है, रामचरन छत्तीन।
तुलसी देखु बिचारि हिय, है यह मतो प्रबीन॥

(३) सद्व्यवहार और अतिथि सत्कार

तीसरा मुख्य धर्म्म सद् व्यवहार है। इसका कुछ भाग पतिव्रत धर्म्म में आगया है। हमारा व्यवहार अपने कुटुम्बियों से, अपने सम्बन्धियों से, अपने बड़ों और छोटों से जैसा होता है वह पति के अनुकूल होना चाहिए। परन्तु आये गये महिमानों के साथ भी हमारा व्यवहार दो बातों पर निर्भर होना चाहिए। एक तो यह कि वे जिस दरजे के हों उस दरजे से अधिक सुख मिले। अगर अधिक न बन पड़े तो उनके दरजे के बराबर आराम उनको अवश्य मिले। आप दुःख उठा लेवै परन्तु उन्हें सुख दे। उनके सुखका सामान करके तब अपना सामान करे। दूसरे यह कि जाने हुए महिमानों के सिवाय अतिथि अभ्यागत,

बेजाने हुए मह्निमान भी आ जाते हैं। भूले भटके दीन दुःखी बटोही, सन्यासी महात्मा, विपत्ति के मारे आ जाते हैं। इनको भर सक समझ बूझ कर आश्रय देना, भोजनादि से सत्कार करना हमारा धर्म्म है। अगर ईश्वर ने हमें उनके पूरे सत्कार की समाई नहीं दी, तो मीठे वचन तो नहीं गये। बाज़े झिड़कियाँ देते, बड़ी कठोरता का बर्त्ताव करते हैं, परन्तु बेजाने महिमानों से ऐसा बर्त्ताव अत्यन्त अनुचित, बड़ी निठुराई है। गृहस्वामिनी का यह बड़ा आवश्यक और उत्तम धर्म्म है, आर्यसन्तानों के उत्तम कुलकी रीति है, मोक्षका मार्ग है, दया-धर्म्म की इसमें ही सर्वोत्तम शिक्षा है।

इसके सिवाय संसार में रहकर बहुतेरों से हमारा सम्बन्ध लेन-देन, काम-काज का लगाही रहता है। इसमें पहिली बात तो अपनी ओर से न्याय और ईमानदारी और दूसरी बात औरों की भूल चूक पर क्षमा और दया का बर्त्ताव। यही अच्छे व्यवहार की कुंजी है। इसकी पूरी कोशिश करने से कभी हानि नहीं हो सकती।

परम आवश्यक बातें

आज तक हम स्त्रियाँ आपस में मिलना जुलना, चिट्ठी पत्री का व्यवहार करना कराना नही जानती थीं। अपने घरों में बैठी बैठी यह समझती थीं कि जो कुछ लियाक़त का काम है बस इतने में ही है कि अपना सारा समय खाने, पीने, सोने, चबाव और व्यर्थ बकवाद में बिताया करें। अब भी हमारा जी ऐसा छोटा है कि एक दूसरी के दुःख दर्द का ख्याल कम रखती है। परोपकार, पराये काहित तो सपने में भी नही सोंचतीं। इसपर तो ध्यान ही नहीं है कि हमारा समय, हमारी आयु कैसे कामों में बीत रही है। इस बातका शौक नहीं है कि हम अपने बचे बचाये समय को अच्छी अच्छी कलाओं और विद्याओं के सीखने में लगावें। पुरुष भी अपनी अर्धांगिनी को ऐसा समझते है कि यह केवल सन्तान उत्पन्न करने के लिए है, और कोई गुण इनमें नही। इस स्त्री रूपी मशीन (यंत्र) को भोजन वस्त्र आदि कोयला पानी

दकर ठीक रखना क़ाफ़ी है जिसमें यह मशीन बच्चे उत्पन्न करती रहे। हमारी बहिनें भी ऐसा समझती ह, हम केवल घर की शोभा बढ़ाने को संसार में आयी है। हम लोग इस तरह दिन पर दिन अपने को ऐसा गिराती रहीँ कि अब पाग से पनही हो गयी है, परन्तु फिर भी हमारी आँखें नहीँ खुलीँ, फिर भी हम नही चेतीँ।

हमारी बहिनोँ में बहुतोँ को यह नहीँ मालूम है कि अगले जमाने में स्त्री पुरुष बराबर का दरजा रखते थे। साधारण काम-काज तो अलग रहा, लड़ाई में भी अपने पुरुषोँ के संग संग स्त्रियाँ लड़ने जाती थीँ और उनकी सहायता करती थीँ और कभी कभी पुरुषोँ से भी वे अपनी कार-गुजारी में बढ़ जाती थीँ। उस समय स्त्रियाँ छोटी और पुरुष बड़े नही माने जाते थे। राजकाज में भी स्त्रियाँ पुरुषोँ के बराबर थीँ। वेद शास्त्र के ज्ञान में भी वे बड़ी भारी भारी पंडिताएँ थीँ।

पुराणोँ में [देखो देवी भागवत स्कन्ध ५, अध्याय ७-१६] बड़े बड़े दैत्योँ को, जैसे महिषासुर, चंड, मुंड

आदिको दुर्गा देवी ने ही मारा। इन्द्र की सहायता को जब दशरथ गये थे तो वीरवामा कैकेयी साथ थी। रणमेँ जब रथ के पहिये को धुरा टूट गया तो उसकी जगह कैकेयी ने अपना हाथ डाल दिया था और अपने पति की रक्षा की थी। वीर रानियोँ मेँ हाल की अहल्याबाई, दुर्गावती, लक्ष्मीबाई प्रसिद्ध ह। इन वीर रमणियोँ ने राज्य का स्वयं बन्दोबस्त किया है, घोड़े पर सवार हो अपने सिपाहियोँ के आगे आगे युद्ध किया है। गान्धारी, द्रौपदी आदि ने अपने पतियोँ को भी नीतिका उपदेश किया है। राजा जनक के यहाँ देश देश के एक से एक विद्वान ऋषि इकट्ठा हुए थे किन्तु उस सभा मेँ गार्गी नामकी ऋषि-कन्या ने अपने शास्त्रार्थ से याज्ञवलक ऋषि के छक्के छुड़ा दिये। विद्या के लिए सरस्वती देवी प्रसिद्ध ही हैँ। लीलावती गणित शास्त्र मेँ एक प्रसिद्ध विदुषी हो गयी है, इसी तरह बराबर पंडिताएँ होती आती है और आज भी देश मेँ थोड़ी बहुत पंडिताएँ मौजूद हैँ।

हमारे देश की युद्ध के सिवा और प्रकार की वीर बलाएँ भी प्रसिद्ध हैँ। रूपवती पद्मावती, कमला,

शिवाजी की रानी सुमुखी, रानी फूलकुमार आदि देवियों के नाम किसने नहीं सुने हैं। ये सब देवियाँ पहले हो चुकी हैं इससे कोई ऐसा न समझे कि अब आजकल भारत सूना है। इस समय भी भारत में वीरबालाओं, पंडिताओं, सती और सुमाताओं की कमी नहीं है। हम जो उन्हें नहीं जानती उसके कई कारण हैं। एक तो यह कि हम परदे में इस तरह बन्द रहती हैं कि सारा संसार जो कुछ हमारे लिए है चार-दीवारी के भीतर ही भीतर है। कुएँ के भीतर जो मेंडक सदा से रह आया है उसे क्या मालूम कि संसार में इससे भी बड़े बड़े जलाशय हैं। हमारी भी वही दशा है। किन्तु इसमें भी सारा अपराध परदे का ही नहीं है। डाक, रेल, तार, अखबार, प्रेस के समय के पहले देश के लोगों की खबर पुरुषों को भी नहीं रहा करती थी। जबसे इन यंत्रों का प्रचार हुआ है तबसे सारे भारत क्या, सारे संसार के मनुष्य एक दूसरे को जानने लगे हैं। जो बातें आगे बरसों में नहीं मालूम हो सकती थीं, वे आज दो घन्टे के भीतर मालूम हो जाती हैं। जो राह

तरह तरह के संकट और भाँति भाँति की जोखिम उठा कर पहले एक महीने मेँ कटती थी वह अब आराम से बैठे बैठे एक दिन मेँ तय हो जाती है। इस तरह देश और काल मेँ कितना बड़ा फेर पड़ गया, कितनी किफ़ायत हो गयी। ऐसी सुगमता मेँ अब मनुष्योँ मेँ परस्पर सम्बन्ध बढ़ गया है। ऐसी अच्छी दशा मेँ भी जो हम देश की योग्य देवियोँ से परिचय नही रखती हैँ, उन्हेँ नही जानती हैँ, यह परदे का बिलकुल कसूर नही है। इसमेँ प्रधान कारण यह है कि संसार आगे बढ़ गया है परन्तु हम पीछे बैठी ही रह गयी हैँ, लकीर की फकीर बन रही हैँ। बहुतेरियोँ की तो ऐसी कोरी समझ है कि वे आपस मेँ चिट्ठी-पत्री के व्यवहार को भी अवगुण समझती हैँ और आने जाने मेँ, परस्पर मिलने मेँ बड़प्पन की हांनि समझती हैँ। बहुतोँ को अपने बड़प्पन का ऐसा अभिमान है कि वे अपने बराबर वालियोँ मेँ भी इसको छिपा नही सकतीँ। फल यह होता है कि और स्त्रियाँ उन्हेँ घमंडी समझ कर उनसे मिलना जुलना ही पसन्द नही करतीँ।

जब संसार में आपस में मिलने जुलने की ऐसी सुगमता है, तो हम चिट्ठी पत्री द्वारा अच्छी अच्छी देवियों से मेल मुलाकात बड़ी आसानी से कर सकती हैं। हमको मिलने जुलने में इन तीन बातों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए :—

(१) अपनी मिलनेवाली देवियों का अपने बड़ों के समान पूरा आदर करें और कोई ऐसी बात न कहें और न करें और न लिखें जिससे आदर में किसी तरह कमी जान पड़े।

(२) हम अपने मुँह अपना बखान, प्रशंसा न करें, न कोई बात ऐसी मुहँ से निकालें वा लिखें जिसमें किसी तरह का, किसी बात का, घमंड हो। घमंड को तो कभी मन में आने ही नहीं देना चाहिए क्योंकि यह निकम्मी बात है, और जिस पदार्थ का घमंड हम करते ह, एक दिन उससे हमें अलग होना ही पड़ेगा, वह सदा हमारा बना न रहेगा। दूर तक सोचना चाहिए। परन्तु साथही साथ और कोई घमंड दिखावे तो उसका निरादर और अपमान भी न करना चाहिए, क्योंकि एक तो भूल चूक सबसे हो जाती है,

दूसरे उस भूल-चूक पर लड़ बैठना वा निरादर करना भी घमंड ही है। बड़ी नरमी और प्रेम से एकान्त में समझा देना दूसरी बात है।

(३) हम अपनी सखी सहेलियों और मिलने वालियों से बात चीत करने में सदा इस बात पर ध्यान रक्खें कि हमारे मुहँ से कोई बात ऐसी न निकले जिससे उनका जी दुखे। सब बाते मह्मिानदारी की कही जा चुकी हैं, और आप को मालूम भी हैं। सारांश यह कि उन्हें किसी तरह का दुःख न होना चाहिए।

देवियों में इस तरह परस्पर सम्बन्ध होने से एक दूसरे के विचार को जानेंगी और अपना अपना आचार विचार सुधारेंगी। जिस तरह जल ऊँची तली से नीची तली में स्वभाव से ही बह निकलता है, उसी तरह विद्या, अच्छे विचार, अच्छे गुण भी जहाँ कमी पाते हैं वहाँ आ जाते हैं। यही बात है कि अच्छी संगति में बुरी सुधर जाती हैं, कम विद्या वाली अधिक विद्या पाती हैं, गुणहीन गुणवती हो जाती हैं। परन्तु विद्या और गुण में यह एक विचित्रता है कि जिसके पास कम हो उसके पास बढ़ जाने से विद्या और गुण देने

वालोँ की कोई घटती नहीँ होती बल्कि बढ़ती हो जाती है।

किसी कवि ने ठीक कहा है—

"सरसुति के भंडार की बड़ी अपूर्व बात।
ज्योँ खरचै त्योँ त्योँ बढ़े, बिन खरचे घटि जात॥"

आज कल विद्या और विचार के बढ़ाने के उपाय मिलने जुलने के सिवाय और भी हैँ। यह तो अवश्य कठिन बात है कि हम अपनी ऐसी सुयोग्य बहिनोँ से बार बार मिल सकैँ जो हमारी विद्या को बढ़ावैँ, विचार को सुधारैँ और बढ़ावैँ। परन्तु ऐसे ऐसे पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकैँ आज कल छप रहीँ हैँ जिनसे हम सहज मेँ ही उत्तम ज्ञान पा सकती हैँ। इन पुस्तकोँ और पत्रोँ मेँ हमारी योग्य बहिनैँ और हमारे देश के उत्साही पुरुष हमारे लाभ के लिए बड़े परिश्रम से बड़े उत्तम उत्तम लेख लिखते हैँ और कभीं कभी हानि उठाकर भी हमेँ लाभ पहुँचाने के लिए तन मन धन से यत्न करते हैँ। बहुत सी बुद्धिमती विद्यावती देवियोँ ने मिलकर भारत-स्त्री-महा-मंडल स्थापित कर रक्खा है। इसका उद्देश भी यही है कि स्त्री-जाति का हर

तरह पर उपकार हो। इसके द्वारा भी पत्र निकलता है और दूसरे दूसरे उपयोगी काम भी स्त्रीशिक्षा और उन्नति सम्बन्धी होते हैं। इस मंडल की सहायता प्रत्येक स्त्री को करनी चाहिए।

स्त्रीजाति के लाभ के लिए श्रीमती गोपालदेवी की गृहलक्ष्मी और श्रीमती नेहरू का स्त्री-दर्पण स्त्रियों के लिए अनमोल मासिक पत्र हैं। इन्हें पढ़ कर बहिनें बहुत लाभ उठा सकती हैं। इनका वार्षिक मूल्य भी बहुत नहीं है। जो बहिनें इतना भी खर्च नहीं कर सकतीं उन्हें ये पत्र मँगवा कर दिखाने और पढ़ने के लिए देने चाहिए। यह उपकार का काम अत्यन्त आवश्यक है और इस काम में बहुत बड़ा पुण्य है।

हम लोगों को चाहिए कि अपनी अपनी शक्ति के अनुसार पत्र निकालनेवाली और महा-मंडल में सम्मिलित होनेवाली तथा समाज के साथ सहानुभूति रखनेवाली बहिनों का साथ तन मन धन से करें। रानियों से लेकर १० रुपया मासिक आमदनी वाली बहिनों तक को चाहिए कि मंडल के चन्दे देने और समाचारपत्र मँगाने से न चूकें, और ऐसा हाथों हाथ

इस काम को उठा लेवें कि जिससे हमारी बहिनों पर अधिक बोझा न पड़े। यदि धनाभाव से मंडल व पत्रों का काम बन्द हो जावेगा तो इससे बढ़ कर और क्या लज्जा की बात है? यदि हम इस काम में चूकेंगी तो ऐसे अन्धकूप में पड़ेंगी कि जिससे निकलना कठिन है। दस पाँच रुपये के लोभ से इस काम से दिल न हटाना चहिए नहीं तो,

"फिर पछताये होत क्या, चिरिया चुग गयी खेत।"

हमारे इस लेख पर अधिक ध्यान दे कर इस बात को मान लीजिए कि आप लोग १० रुपया सेकड़े अपनी आमदनी पर अपनी स्त्रीजाति के सुधार में खर्च किया कीजिए। यानी जिनकी आय १० रु० मासिक है १) माहवार और जिनकी आय १००) मासिक है वे १०) माहवार इस उत्तम कार्य में दिया करें। जहाँ तक बन पड़े सब महारानी, रानी, ठकुराइन, बबुआइन, दरोग़ाइन, सूबेदारिन, वकलाइन, पंडाइन, बनिआइन इत्यादि जितनी बहिने हैं, सब इसे अपना ही काम समझें और घर पीछे एक बहिन दृढ़ प्रतिज्ञा के साथ इस काम पर उतारू हों और जितनी बहिनें घर में हों सबको समझा

बुझा कर इस काम में शामिल करें और उत्साहित करें।

मेरी प्यारी बहिनो! अपनी जाति की उन्नति के लिए एक दूसरे का साथ दीजिए और साथ ही इसका ख्याल रखिए कि उन्नति की राहें जो इस समय इस प्रान्त में खुल गयी हैं—यानी (१)—महामंडल, (२)—गृहलक्ष्मी, (३)—स्त्रीदर्पण, कुछ काल तक इन्हीं का अवलम्ब लेना चाहिए। और तरह पर काम न चलेगा। काम दो तरह के लोग करते हैं—(१) व्यापार के लिए (२) औरों को लाभ पहुँचाने तथा समाज के सुधार के लिए। दोनों से हम सबको लाभ पहुँचता है, किन्तु इस समय दूसरे प्रकार की बड़ी आवश्यकता है। यह काम उदार-हृदयवाले महान जीवों का है कि अपना खर्च करके अपनी जाति को लाभ पहुँचाते हैं। जो लोग अपने लाभ के लिए उपकार करते हैं वे मध्यम श्रेणी के हैं। परन्तु जो किसीका उपकार नहीं करते, बल्कि हानि पहुँचाते हैं, वे अधम हैं। इस समय हम सब को चाहिए कि अपना स्वार्थ छोड़ कर समाज के लाभ पर अधिक ध्यान देवें।

आज कल प्रयागराज में कई सुयोग्य बहिनें प्रेस खोलकर हमारी स्त्री-जाति के लिए बहुत सी उपयोगी पुस्तकें निकाल रही हैं। अब हम लोगों को भी अपने बिचार छपवाने सहज हो गये हैं। मैं ने सुना है कि आज कल एक बहिन एक ऐसी पुस्तक लिख रही हैं जिसमें १५०० तरह के अचार, चटनी, मुरब्बा, आदि के बनाने की विधियाँ हैं। इसके सिवाय और तरह तरह की पुस्तकें लिखी रही हैं। हमारी सुयोग्य बहिनें इसी प्रकार डाक्टरी और धाय आदि के कामों को सीखने में यदि परिश्रम करती तो हम लोगों का बड़ा लाभ होता। शहरों में दो चार औरतें दाई के काम में अवश्य चतुर पाई जाती हैं, परन्तु देहात में उनका आना नही हो सकता। जैसे फेरीवाले बजाज़ जाड़े के दिनों में घूम घूम कर कपड़ा बेचते हैं, वैसे ही स्त्रियों के हाथ बिक्री की चीज़ें देहातों में भेजवाई जावें तो स्त्रियों को आपस में दाम काम करने में बड़ा सुभीता हो और पसन्द से वस्तुएँ भी मिल जाया करें। दरज़ी, बढ़ई, लोहार आदि पेशेवालों के घर की औरतें भी अपने पेशे के काम में जो चतुर होती तो आज कल

जो अड़चन हमें कपड़ा सिलाने आदि में होती है कभी न होती और देश की दीन दशा न रहती। मगर बड़े दुर्भाग्य की बात है कि उनके घर की औरतें समझती हैं कि मर्द हमारा गुनी है, हमको क्या करना है? यदि बुद्धि से विचार किया जावे तो इस में बहुत बड़ी हानि है। ईश्वर न करे कि मर्द कभी बीमार पड़ या कोई विपत्ति आ पड़े, जिससे मर्द दूसरे झगड़ों में फँस जावे, तो स्त्री के काम न जानने से पुरुष का काम बिल्कुल रुक जायगा और रोज़गार बन्द हो जाने से जो हर्ज होगा सो प्रकट ही है। स्त्री पुरुष की अर्द्धांगिनी कैसी, जो आये दिन उसका काम संभाल न सके, उसे सहारा न दे सके? जैसे साधु का बल क्षमा, ब्राह्मण का बल तप, क्षत्रिय का बल शूरता, स्त्री का बल सतीत्व और सब का बल सत्य है, वैसे ही अपने हाथ का बल अपना गुण है, जो दूसरों के गुणों के भरोसे नहीं चल सकता। एक हाथ कटने से रुक जाय और दूसरा हाथ उसे न सँभाल सके तो वह दूसरा हाथ निकम्मा है। कैसे दुःख की बात है कि हम अपने पति के कामों को न जानें और आये दिन निकम्मी दीखें।

एक ब्राह्मण मिर्ज़ापूर ज़िले का रहनेवाला था। कुछ काल से हमारी रियासत में बाल बच्चों समेत रहता था। उसके दो लड़के थे—एक पाँच बरस का और दूसरा दो बरस का था। उसके दो छोटे भाई और थे; एक की शादी हुई थी, दूसरा बे-ब्याहा था। इन ब्राह्मणों की माता अभी जीती थी। अचानक उस ब्राह्मण का देहान्त हो गया। उसके मरने पर पन्द्रह दिन तक सब लोगों ने शोक मनाया। फिर सास ने अपनी पतोहू से कहा कि अब तुम राँड़ हो गयी हो, रात दिन में एक बार खाया करो। वह बेचारी ऐसा ही करने लगी। परन्तु जब लड़के भूखों मरने लगे तब उससे न रहा गया, अन्न निकाल कर पीस कूट कर उनको खिलाने लगी। सास ने हर जगह ताला बन्द कर दिया और एक दिन लड़ाई करके उसे घर के बाहर गोशाला में कर दिया। गाँव के लोगों के सम-झाने बुझाने पर सास उस बेचारी को सेर भर सूखा अन्न देने लगी। मगर उसकी देवरानी अच्छी थी, सास की चोरी से कुछ खाने को दे दिया करती थी। सास और देवर को जब पता लगा तो उन्होंने

देवरानी को मारा, और उस विधवा को वहाँ से निकाल दिया। वह बेचारी गुणहीन स्त्री बेबस हो माँगने खाने लगी। माँगते माँगते एक दिन हमारी खिड़की के पास करुणा भरे स्वर में, दर्दनाक आवाज़ में, कुछ गाती हुई भीख माँगने आयी, और कुछ देर तक गाती और रोती रही। मेरे कान में उसके शब्द पड़े तो मैंने उसे अपने पास बुलवा कर सारा हाल पूंछा और उसने सब सच सच कह सुनाया। मने नौकरों से जाँच कराया तो सब ठीक निकला। फिर मैंने उससे कहा कि तू नित हमारे यहाँ आया कर, चार आने रोज़ पावेगी। वह वस्त्र से हीन अति दीन दशा में थी। मैंने उसे वस्त्र मँगा कर पहिनवा दिया। फिर वह रोज हमारे यहाँ आने लगी। मने उसे चार महीने के भीतर सीना-पिरोना अच्छी तरह सिखा कर आठ आने रोज़ मजूरी के लायक़ बना दिया और एक छोटा सा मकान बनवा कर उसे गृहदान कर दिया। जब उसकी सास ने सुनां, देवर ने सुना, तो आकर उन्होंने भी उसे घेरा; परन्तु वह ऐसी अच्छे स्वभाव की स्त्री थी कि पिछली बातों को

भूल कर उन सबका बड़ा आदर करने लगी। सच है, जिससे कुछ स्वार्थ निकलता है उसको सब मामा, दादा, भाई, बहिन कहते हैं, और जिससे कुछ स्वार्थ नहीं सधता, उसके सगे भी बैरी बन जाते हैं, अपने कुटुम्ब को भी घर से निकाल देते हैं। संसार में स्वार्थ के संगी असंख्य हैं, जैसा किसी कवि ने कहा है—

सवैया

फलहीन महीरुह को खग-वृन्द,
तजैं वन को मृग भस्म भये।
मकरन्द पिये अरविन्द मलिन्द,
तजैं सर सारस सूख गये।
धनहीन मनुष्य तजैं गणिका,
नृप को सठ सेवक राज हये।
बिन स्वारथ कौन सखा जग में,
सब कारज के हित होत भये॥

उत्तम जन वे हैं जो अपने बाहुबल से अपना और दूसरों का निर्वाह करते हैं। वे मध्यम हैं जो केवल अपना पेट पाल लेते ह। परन्तु वे अधम ह जो अपना

पेट पालने के अर्थ भी दूसरों का मुँह जोहते हैं। जो लोग अपने हाथ के बल से, अपने पुरुषार्थ से, अपने बाहुबल से, अपना निर्वाह करते हैं, वे सदा सुख से जीवन बिताते हैं और जो दूसरों के आसरे जीते हैं, सदा दुखी रहते हैं।

लड़कियों का समय विभाग

"चुनले कलियां चूक न अवसर, काल है जात पराय।"

प्रातःकाल पाँच बजे चारपायी से उठ कर, हाथ मुँह धोकर, कंघी करके, नहा डाले और जिसके घर में जो देवता माने जाते हों, उनका स्मरण करके, माता पिता या अपने से जो बड़े हों उनको प्रणाम करके, एकान्त में जा बैठे। तब एक घंटा हिसाब लगावे और एक घंटा अच्छे अक्षर लिखने का अभ्यास करे। आठ बजे जलपान करके पुस्तक पढ़ना आरम्भ करे। एक घंटा गद्य या पद्य की पुस्तक पढ़े। एक घंटा हिसाब की पुस्तक देखे। दस बजे अपनी घरवालियों के साथ भोजन करे। आधा

घंटा आराम करके ग्यारह बजे से चित्रकारी का काम बारह बजे तक सीखे। इसके बाद सब सामान ठीक करके कपड़े की कतर ब्योंत सीखे, जैसे अँगरखा, पायजामा, अँगिया, कुरती आदि। चार बजे इस काम से छुट्टी पाकर कुछ खा कर पानी पीवे और थोड़ी देर तक अपने घर की माँ बहिनों के पास बैठ कर बात चीत करे, और कुछ कपड़े रँगने की बाबत पूछ पाछ करे। फिर नित्य कर्म से छुट्टी पाकर थोड़ा आँगन या फुलवारी में टहले, पेड़ों की पत्तियों की पहिचान करे, और उनके रँग और सुबास को समझे, और पेड़ों में पानी देवे। छः बजे से रसोई में बैठ कर आँच सहने का अभ्यास डाले। किसी दिन चावल, किसी दिन पूरी, किसी दिन मिठाई, इसी तरह भाँति भाँति की चीजें अदल बदल कर बनावे और सीखे। यह सब वस्तु बिना नित बनाये अभ्यास नहीं होता, और जिसको अभ्यास हो गया है उसके हाथ की रसोई बहुत सुस्वादु और मीठी होती है। आठ बजे रसोई से निकल कर, पैर धोकर, पुस्तक लेकर लेट रहे। फिर नौ बजे खाना खाकर सो रहे।

लड़कियों के लिए उपयोगी पुस्तकें

पहिली, दूसरी, तीसरी पुस्तकें पढ़ चुकने पर छोटीबहू, गृहिणी, स्त्री-सुबोधनी, स्त्री-प्रबोधनी, तुलसीदास का रामचरितमानस पढ़े। फिर थोड़ा बहुत संस्कृत का अभ्यास करने के लिए धातुरूपावली, शब्दरूपावली, लघुकौमुदी, हितोपदेश, पंच-तंत्र, बाल्मीकीय रामायण आदि का गुरू से अभ्यास करे। और स्त्रियों के पढ़ने योग्य हिन्दी के साधारण समाचार-पत्रों के सिवाय गृहलक्ष्मी आदि मासिक पत्रिकाएँ नित्य पढ़े। भूगोल की पुस्तकें तीसरी पुस्तक के साथ ही साथ पढ़ रखना चाहिए। छोटीबहू आदि कहानी की पुस्तकों के साथ साथ भारतवर्ष का इतिहास भी पढ़ना जरूरी है। इसके बाद यदि रुचे तो संसार के और और देशों का इतिहास और स्त्रियों के जीवनचरित्र पढ़ डाले।

गृहिणी का समय त्रिभाग

पाँच बजे प्रातःकाल उठ कर नित्यक्रिया से निवृत्त हो कर सिर में कंघी चोटी करके स्नान कर डाले, और एक घंटा जप करने के पीछे घर के बड़ों को प्रणाम करे। एकान्त में जो प्रातःकाल जप वा ईश्वर वा इष्ट देव का ध्यान किया जाता है, उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। कुछ काल नियम पूर्वक ऐसा करने से विचार बहुत शुद्ध हो जाते हैं। सिद्ध आसन से प्रति दिवस जप करने से आसन का भी अभ्यास हो जाता है, जिससे जीव को इस शरीर में रहते हुए भी सुख मिलता है और परलोक में भी आनन्द होता है। इसके सिवाय इस अभ्यास से मन अपने बस में रहता है। इसी लिए इसको प्रति दिन करना चाहिए। जाड़ों में पाँच बजे तथा गरमियों में चार बजे तड़के उठना चाहिए और सात बजे तक इन कामों से छुट्टी पाकर फिर जा खर्च पहिले दिन का हो लिख लेवे, और जोड़ कर इकट्ठा कर लेवे, फिर जो तहवील (पहले दिन से बची हुई पास की रकम) हो उसे बक़ाया की जगह पर लिख

लेवे, और जो आमदनी पहिले दिन आई हो उसे आम-दनी हाल की जगह लिख लेवे, और ब्यौरा भी लिख देवे कि कैसी आमदनी है। रसीद की याददाश्त भी उसी जगह लिख लेवे। फिर जो घर के काम-काज हों उसमें लगे। फिर घर के मर्दों को नौ या साढ़े नौ बजे तक रसोई खिला कर और पान देकर स्वयं घर की स्त्रियों के साथ खाना खाकर अपने कमरे में स्लेट लेकर आराम से बैठे वा लेटे। बारह बजे तक अपना जी बहलाने के लिए तरह तरह के बेल बूटे स्लेट पर खींचती रहे। इतनी देर में भोजन भी ठीक जगह पर जाकर पचने लगता है और पेट का भारीपन भी जाता रहता है। फिर दो बजे तक रामायण, महाभारत, शृंगार की पुस्तकें, तथा पुरान, इतिहास, समाचारपत्रादि पढ़ती रहे क्योंकि बिना अनेक ग्रन्थ देखे कथाएँ और प्रसंग नहीं समझ में आते, और न ठीक ठीक उनका मतलब खुलता है। चालीस वर्ष की अवस्था तक इन सब पुस्तकों का अभ्यास करे। फिर गीता, वेदान्त, उपनिषद, आदि ज्ञान और परमार्थ की पुस्तकें ढूँढ़ ढूँढ़ कर मँगाती और देखती रहे। बिना क्रम से पढ़े विद्या अच्छा फल नहीं

देती, इस लिए पहिले नीति, फिर काव्य, फिर ज्ञान की पुस्तकोँ का अभ्यास करना चाहिए। काव्य ऐसी चीज है कि बिना इसे अच्छी तरह जाने संसार मेँ जन्म लेने का सुख नहीँ होता। काव्य मेँ रामायण, रघुवंश, कुमारसम्भव और शकुन्तला अच्छी पुस्तकेँ हैँ। हिसाब भी एक ऐसी चीज़ है कि बिना इसे जाने रसोई से लेकर सीना पिरोना तक सब काम कठिन होता है। सभी कामोँ मेँ गणितविद्या का पहिले ही काम पड़ता है। विद्या वह उपाय है जिससे अपने आप पद, पदार्थ तथा अभिप्राय का पूरा ज्ञान हो जाता है।

जिसकी रुचि जैसी पुस्तक या विषय मेँ हो वह उस पुस्तक को दो पन्ने देख लेवे। फिर दो बजे से एक अच्छे और साफ़ कमरे मेँ घर की और महल्ले की चतुर और अच्छी स्त्रियोँ के साथ कुछ बिछा कर बैठ जावे, और कोई मोजा, कोई कुरती, इत्यादि सीने पिरोने का काम करने लगेँ। यदि किसी स्त्री ने बड़ा काम, जैसे चिकन या ज़र-दोज़ी का छेड़ रक्खा हो तो सब मिल जुल कर उसे हाथोँ हाथ जल्दी तैयार कर देवेँ। एक दूसरे की

सहायता से जो काम होता है वह जल्दी और अच्छा होता है। इतना ही नहीं, बल्कि गृहस्थी के जितने काम हैं सब कामों में—जैसे अचार, चटनी, मुरब्बा बनाना, सीना पिरोना इत्यादि कोई भी काम हो—यदि दो चार स्त्रियाँ एक दूसरे का हाथ बटाती हैं तो काम जल्द हो जाता है और आपस का मेल जोल भी बढ़ता है। बाज़ बहिनें यह कह दिया करती हैं कि यह काम तो मैं अकेले कर सकती हूँ, दूसरे की सहायता की क्या आवश्यकता है? उनकी यह रूखी फीकी बात अच्छी नहीं लगती। सब कामों में यही कहना चाहिए कि बिना मेली जोली बहिनों की सहायता के हमारा छोटा सा काम भी नहीं हो सकता है। चार बजे से सब स्त्रियाँ अपने घर के काम काज में लगें, फिर छः बजे सब घर की स्त्रियाँ आँगन में, अथवा यदि घर से मिला हुआ स्त्रियों के योग्य बाग़ हो तो उसमें, आधा घंटा टहल लेवें। फिर रसोई के काम में लगें। ९ बजे सब मर्दों को खिला कर, पान देकर, स्त्रियाँ एक साथ खाकर फिर अपने अपने कमरे में जाकर ईश्वर स्मरण करके सो रहें। जो नित्य ऐसा करेंगी, कभी रोगी और दुःखी न होंगी।

निन्दा

यदिच्छसि वशीकर्त्तुं जगदेकेन कर्म्मणा ।
परापवाद शस्येभ्यो गां चरन्तीं निवारय ॥

जो चाहसि एकहि जतन वस राखन संसार ।
परनिन्दा के क्षेत्र निज गोचर अवशि निवार ॥

"पर निन्दा सम, अघ न गरिसा"

"जड़ चेतन गुन दोष मय विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि विकार ॥" तुलसी

प्यारी बहिनो! संसार में जितने पदार्थ हैं सबमें मनुष्य के लिए कोई दोष अवश्य होता है। कोई पदार्थ इससे बचा नहीं है। परन्तु जो लोग अच्छे स्वभाव के हैं, उदार हैं, चतुर हैं, वे गुणों को ही ग्रहण करते हैं, गुणों से ही काम लेते हैं, गुणों का ही ध्यान करते हैं, और अवगुणों को छोड़ देते हैं, उनका ध्यान नहीं करते, उन पर दृष्टि नहीं डालते। विद्या न होने से, कोई काम-काज में लगी न रहने से, अच्छी शिक्षा न

मिलने से बहुतेरी बहिनोँ का यह स्वभाव सा हो गया है कि जहाँ कहीँ इकट्ठा हुईं, भाँति भाँति के चबाव मेँ, घर घर को निन्दा मेँ लग गयीँ । यह बड़ी बुरी टेँव है । इससे अपना मन विगड़ जाता है, सुनने-वाले का मन बिगड़ जाता है, और झगड़े तो हो ही जाते हैँ। योँ हानि सब तरह की होती है, परन्तु लाभ एक भी नहीँ है। निन्दा करने से आपस मेँ मन मुटाव हो जाता है, जिसकी निन्दा की जाती है उसके कानोँ तक पहुँचे बिना रह नही सकती, और जब पहुँची तो उसके दिल पर चोट लगती है, उसे बड़ा दुःख होता है, उसे बड़ी पीड़ा पहुँचती है । तुलसीदास जी ने क्या अच्छी बात कही है—

परम धरमु स्रुति विदित अहिंसा।
पर निन्दा सम अघ न गरिंसा ॥

अर्थात् वेदोँ मेँ किसीको दुःख न पहुँचाना परम धर्म्म बताया गया है और परायी निन्दा के समान कोई भारी पाप नहीँ है।

यह साधारण रीति से देखा जाता है कि स्त्रियोँ का मन पराई निन्दा सुनने मेँ बहुत लगता है, परायी

निन्दा उन्हें जी से रुचती है। अच्छी बातों में तनिक भी जी नहीं लगता। यह लक्षण अच्छे नहीं हैं। कोई अच्छी चर्चा चले, पवित्र कथा पुराण आदि हो, अच्छों के जीवन की कथा कही जाय, तो बड़ी बूढ़ियों को नींद धर दबाती है और नवयुवतियाँ ऊब कर उठ जाती हैं; किसी न किसी बहाने से वहाँ से हट जाती हैं। जो कहीं किसीकी निन्दा होती हो तो नींद भाग जाती है, सारा काम-धंधा बन्द हो जाता है; सौ हर्ज करेंगी, पर निन्दा के एक एक शब्द को वे सुने न जाने देंगी, और ऐसे प्रेम से हाँ में हाँ मिलावेंगी कि मानो बड़ी प्यारी कथा हो रही है।

प्यारी बहिनो! इस निन्दा-रूपी ज़हर को, विष को, अपने कानों से अपने हृदय के भीतर क्यों जाने देती हो? याद रक्खो, जो खल

"पर अघ सुनै सहस-दस काना।"

उसकी रीति पर मत चलो, क्योंकि जो निन्दा करती है वह जितनी अपराधिनी है, उससे भी अधिक दोष निन्दा सुननेवाली का है। कहावत है कि "कहता बाउर, सुनता सरेख"। अपनी निन्दा कोई करे तो बड़ा

कड़ुवा लगता है, यद्यपि नियम यह होना चाहिए कि अपनी निन्दा शान्तिपूर्वक सुन ले और ठंढे जी से विचार करे; यदि अपने में दोष देखे तो उसके दूर करने में जी जान लड़ा दे। दूसरों के दोष सुनकर हमें क्या लाभ होगा? दूसरों के दोष सुनने से मन में वैर-भाव, घृणा आदि जो पैदा होती है उससे सुननेवाले को हानि छोड़ लाभ नहीं हो सकता।

यह भी अच्छी तरह याद रहे कि जो आज हमारे सामने परायी निन्दा करती है, कल दूसरे के सामने हमारी ही निन्दा करेगी, क्योंकि निन्दा करना उसका स्वभाव ही है। इसलिए खबरदार, यदि कोई तुम्हारे सामने किसीकी निन्दा करे, उसे प्रीतिपूर्वक रोक दो, और यदि टहलनी आदि हो तो बरज दो कि फिर कभी ऐसी बुराई न करे। न परायी निन्दा करे, न करावे, न सुने, न सुनावे, क्योंकि इससे बढ़कर पाप कोई नहीं है।

ऐसा भी अकसर देखा गया है कि आज जो बहिनें किसीके एक दोष पर हँसती और ठट्ठा मारती

रही हैँ, कल उन्हींकी उन्हीं दोषौँ मैँ फँस जाने पर हँसी हुई है। आज उसकी तो कल हमारी बारी होगी, ऐसा सोचकर दूसरे के दोष पर हँसना बड़ी भारी भूल है।

संसार मैँ तरह तरह के लोग हैँ, हर एक पुरुष स्त्री की रुचि भिन्न भिन्न होती है। किसीको कुछ काम रुचता है और किसीको कुछ पसन्द आता है। जिसे जो काम पसंद आता है वह उसीकी सराहना करता है, और जिसे जो नहीं भाता उसकी वह बुराई करता है। किसीको गाना बजाना अच्छा लगता है, किसीको विद्या सीखना पसन्द है, कोई परोपकार मैँ आनन्दित है कोई, स्वार्थ-साधक है, कोई ज्ञान मैँ मस्त हैँ, कोई ध्यान मैँ, कोई योग मैँ, कोई भोग ही को श्रेष्ठ मानता है। अपने अपने कामौँ को सबही लोग अपने अपने स्वभाव से उत्तम जानते हैँ और विपरीत स्वभाव वाले के गुणौँ को न जानकर उसकी निन्दा करते हैँ—जैसे पातिव्रत-धर्मचारिणी स्त्रियाँ और योगी जनौँ की भोगी मनुष्य निन्दा किया करते हैँ। मनुष्य तीन प्रकार के होते हैँ, जैसा राजर्षि भर्तृहरि लिखते हैँ—

शार्दूल विक्रीड़ित

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये ।
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये ।
ते मी मानुष राक्षसापरहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये ।
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥ १ ॥

भावार्थ—सत पुरुष वे हैं जो अपना अर्थ छोड़ दूसरे के अर्थ को साधते हैँ। सामान्य पुरुष वे हैं जो अपने और दूसरे दोनोँ के अर्थ साधते हैं और मनुष्यों मेँ राक्षस वे पुरुष हैँ जो अपने अर्थ के लिए दूसरे के कार्य को नष्ट करते हैँ। परन्तु जो व्यर्थ दूसरे के कार्य की हानि करते हैँ उनको हम नहीँ जानते कि कैसे पुरुष है।

विचार से जाना जाता है कि भलाई बुराई दो तरह से पैदा होती है, एक तो अपने स्वभाव से ही और दूसरे औरोँ के संसर्ग या संगति से। यदि जन्म से स्वभाव बुरा और नीच है, तो एक दम छूट जाना दुस्तर है, परन्तु अच्छी संगति का ऐसा प्रभाव है कि

"खलउ करहिँ भल पाइ सुसंगू"

यद्यपि, "मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू।"

परन्तु जो बुराई केवल संगति के दोष से उत्पन्न होती है, वह महात्माओं के उपदेश, उत्तम शिक्षा, कुसंग के छोड़ने और सुसंग के ग्रहण करने से बिल्कुल छूट जाती है। इसलिए हमें सदा सब की भलाई सुननी चाहिए और बुराई से अपने कानों को दूषित नहीं करना चाहिए।

हमको चाहिए कि हम किसीको झूठा दोष न लगावें। जो बात कहें, पहले दो बार सोचकर विचार पूर्वक कहें। बहुधा स्त्रियों का स्वभाव ऐसा होता है कि जो अपने प्रतिकूल करते किसीको देखती ह या दस पाँच आदमी के मुँह से शिकायत सुन लेती हैं, तो ले उड़ती हैं और कहने लगती हैं कि इन्होंने तो बड़ा अयोग्य काम किया। मर्दों के बीच में बैठ कर व्याख्यान देती हैं। दूसरी ने तो ऐसी कुरीति की कि विलायत चली गई। तासरी ने तो ऐसी बेहयाई इख़्तियार की कि परदा नहीं करती। चौथी ने तो ऐसी ढिठाई की कि घूंघट नहीं निकालती—सब के सामने मुँह खोले रहती है। इन सब बातों के कहने से कुछ फ़ायदा नहीं है। हम लोगों को तो चाहिए कि जहाँ

तक बन पड़ अपनी बहिनों के बारे में अगर ऐसी ऐसी कोई बात करें तो ऐसी माकूल दलील करें कि फिर किसीको कहने सुनने का मौका न मिले। अगर कोई कहे कि किसीके सामने लेक्चर देना बुरा है तो इसमें केवल बुराई ही नहीं देखनी चाहिए। अजब क्या है कि अपने समाज की स्त्रियों के लिए यह काम उठाया हो। अगर विलायत जाने से कोई क़िसी को दोषी बनाये. तो व्यर्थ है विचार लेना चाहिये कि केवल तमाशा ही देखने के लिए हमारी प्यारी बहिनें कभी ऐसा सफर नहीं कर सकती हैं। ख़ास मतलब कोई ऐसा ही आन पड़ा होगा, जिससे अपने ऊपर यह बदनामी का बोझ लेकर आप बहिनों को फ़ायदा पहुँचाने के लिए उद्योग कर रहीं हैं। क्या ऐसा ख़्याल में नहीं आ सकता? अगर परदा नहीं करती हैं तो इससे यही मतलब नहीं निकालना चाहिए कि ख़ास करके चाल-चलन की ख़राब है इससे ऐसा करती हैं। वह बड़ी पापिनी स्त्रियाँ हैं जो ऐसा ख्याल करती हैं। हमारे ख़्याल में तो जिनके चित्त में कुछ अशुद्धता रहती है वही लोग बहुत बड़ी नुक्ताचीनी करती हैं। कुछ ऐसा समझती है कि

कोई देख लेगा तो हम अशराफ़ न कहावेंगी लेकिन यह ख़्याल भी ग़लत है। सीता, सती, पार्वती के समय से और आज तक हर जगह परदा नहीं है। किसी ख़ास ऐसी ही जगह परदा है। विचार करके देखा जाय तो जहाँ पर परदा नहीं है वहीं स्त्रियाँ ज्यादा शुद्ध विचार को निकलती हैं और जब से परदा का रिवाज हुआ तब से सती स्त्रियाँ बहुत कम होती हैं। यह एक मिसाल क्या थोड़ी है? कोई देवी जो घूंघट नहीं निकालती तो इसी वजह से उसको ढीठ कहना उचित नहीं है, क्योंकि सच्ची लज्जा स्त्री की आँखों में होती है। महाराष्ट्र, गुजराती, तेलंगी और तामिली देवियाँ कभी परदा और घूंघट नहीं निकालतीं, परन्तु देखो उनमें बड़े घरों की देवियाँ की आँखों से लाज टपकी पड़ती है। घूंघट वालियों की चितवन तिरछे झाँकते ताकते बिगड़ भी जाती है। किन्तु बे घूंघट वालों की चितवन शुद्ध और पवित्र होती है। किसी कवि ने क्या सच कहा है किः—

घूंघट के पट ओट तें, मति पतिआयो कोय।
मूंदे अँखिया बाज ज्यों, अधिक शिकारी होय॥

कभी कभी घूंघट निकाले हुए देख कर ही अशुद्ध चित्त वाले, ताकने लगते ह । घूंघट न होता तो कदाचित उनका ध्यान भी उस ओर न जाता। बड़े घर की बूढ़ी से बूढ़ी माताएँ भी बड़ा लम्बा घूंघट निकालती ह, जिससे जवान लोग उन्हें युवती ही समझ लेते हैं । एक समय की बात है कि एक सज्जन अपनी बूढ़ी माता के संग जिनके मुँह में दाँत एक भी नहीं थे, खाल में झुर्रियाँ पड़ रही थीं, कहीं जा रहे थे। उनके घूंघट के कारण उनकी ओर एक मनचला बहुत देर से ताक रहा था। और किसी ने तो उसके ताकने को देखा नहीं किन्तु बुढ़िया देखती रही। उसे बहुत बुरा लगा। बैठे बैठे एकाएक घूंघट उठा कर मुँह खोल कर दिखा दिया और बोली, "ले देख, क्या देखेगा ? जो घंटों से घूर रहा है, मेरे मुँह में तो एक दाँत भी नहीं है।" वह जवान बड़ा खिसियाना होकर रह गया ।

इससे समझ लेना चाहिए कि बिना घूंघट न तो कोई लाज या हानि की बात है, और न घूंघट होने से ही लाज रहती है या कोई विशेष लाभ होता है। देश

के लाभ पहुँचाने को अगर कुछ बहिनें इस बन्धन को तोड़ कर सैकड़ों बदनामियाँ उठा कर काम करती हैं तो इसमें कोई बुराई नहीं है, बल्कि वे हमारा बड़ा भारी उपकार करती हैं। उन पर हँसना बड़ा अन्याय है। प्राचीन काल में न तो परदा था और न इसकी आवश्यकता थी। सीता, सावित्री, सती, द्रौपदी, कैकेयी आदि क्या परदा वा घूंघट रखती थीं ?

जिन कारणों से हमारे देश में परदे का रिवाज हुआ, उन्हें लोग एक दम भूल गये। परदे का रिवाज हमारे देश का नहीं है, वरन मुसलमानी देशों का है। जिन बातों पर परदा शुरू हुआ, जिन बातों से परदा करना आवश्यक था, वह तो हवा हो गयीं। अब एक न एक बनावट की बातें बतायी जाती हैं, मनमानी शाखाएं निकल रही हैं। मूर्खा स्त्रियाँ, मूर्ख पुरुष, यह कहते और समझते हैं कि स्त्री को यदि कोई पुरुष देख लेगा तो उसकी कुछ इज़्ज़त नहीं रहेगी। स्त्री को खाँसी आ रही है, खाँस रही है, भला कोई पुरुष सुनेगा तो कैसी बदनामी की बात है, स्त्री का घुँघुरू बोलना कोई मर्द सुनेगा तो स्त्री को हज़ार जन्म

नरक भोगना पड़ेगा, खिड़की से झाँक देगी तो स्वकीया कैसे कहलावेगी ? स्त्री के कंठ से कोई गाना निकलेगा तो फिर गणिका कहलाने में क्या बाकी रहा ? स्त्री को विद्या पढ़ा कर क्या करना है ?'' इत्यादि इत्यादि। हे भगवन्, क्या स्त्रियाँ मनुष्य योनि में नहीं हैं ? फिर क्या बात है कि बिल्कुल पत्थर की मूर्ति सी बना दी गयीं। हर तरह से हमारे देश की स्त्रियों की जिन्दगी बरबाद कर दी गयी। यही कारण है कि हमारी सन्तान डरपोक, स्वार्थी, बल-हीन और नीच वृत्ति हो रही है।



लड़कियों की दुर्दशा

"कत विधि सृजी नारि जग माहीँ
पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीँ ।"

जब लड़की पैदा होती है तब से ही माता पिता ऐसे उदास हो जाते ह कि मानो बड़ा भारी संकट आ पड़ा। इसका मुख्य कारण दायज का लेन देन है। अगर घर में दो भाई हैँ और एक के लड़की है, तो लड़की वाले पिता और माता को रूखा सूखा भोजन करके, फटे पुराने कपड़े से बसर करना पड़ता है वे अपना जीवन कठनाई से काटते हैँ और सदा गरीब से बने रहते हैँ। यह सब बखेड़े दायज के हैँ। जहाँ जहाँ विद्या का प्रचार हो रहा है, वहाँ दायज का झगड़ा बहुत कम होना चाहिये और जहाँ विद्या का अभाव है वहाँ ही अधिक। किन्तु बड़े शोक की बात है कि विद्या का जितना प्रचार है उसके अनुसार दायज के अंधेर खाते में कमी नही हो रही

है, छोटे बड़े सब फँसे हुए हैँ। रईसोँ का कैसा बुरा दिन आने वाला है कि कितने धर्म सभा भी करते हैँ और इसको जानते भी हैँ कि वायज लेना बुरा है और कहते भी हैँ, किन्तु उस पर चलते नहीँ हैँ, बल्कि ऐसे लालच मेँ फँस जाते हैँ कि जहाँ दस हजार पाने लगे, वहाँ बीस हजार की इच्छा प्रगट की, और यह शर्म नही करते कि यह कैसा तुच्छ कर्म हम कर रहे हैँ। सभा मेँ क्या कसम खायी थी, क्या प्रतिज्ञा की थी? कोई समय था कि मनुष्य अपनी बात पर जान देते थे, पर वह अब कठिन समय आया कि ठीकरोँ पर जान देते हैँ। हाय! इस कठिन रीति के ऊपर कैसे धर्म का निर्वाह हो सकता है? पहिले समय मेँ यह रीति नहीँ थी कि कुछ ठहराव होवे, जितनी जिसकी श्रद्धा होती थी, लड़की को देता था। जब से यह परदा चला है, तभी से यह कुरीति प्रचलित हुई। अब तो यह नियम हो गया है कि अच्छे से अच्छे क्षत्री आदि ऊँची जातिवाले शुभ कर्मवाले ऊँचे वंश के निर्धन पड़े हैँ और उनकी बेटियाँ रूप गुण मेँ उजागरी, सत्यवती बेब्याही पड़ी हैँ। किन्तु ऐसी लड़कियोँ के

लेने में रईस लोग अपनी हेठाई समझते हैं और जिसके पास ऐश्वर्य है, उसकी लड़की चाहे लाख अवगुण से भरी हो, चाहे जाति हो, या कुजाति, इसका कुछ विचार नहीं होता। उसके यहाँ शादी कर लेने में लोग अपनी बड़ाई ही समझते हैं। धनी के घर ब्याह करके चाहे धोखा भी उठावें, तब भी धनी के ही घर ब्याह की इच्छा बनी रहती है। जब लड़की वाले की ओर से ब्याह के संदेसे आते हैं तो लड़के वाले जिसको समझते हैं कि इस गाँव में बड़ा धूर्त है, उसीको तिलक तै करने को बुलाते हैं। जब लड़की वाला ५ हज़ार बोले तो वह महापुरुष १५ हज़ार बोले, अन्त को किसी किसी तरह ठाँय ठाँय करके जब लड़की वाले ने १५ हज़ार मंजूर किये और लिखा पढ़ी हो गयी तब लड़के वाले ने यह ढंग फैलाया कि "आप के यहाँ जाने में सवारी-शिकारी में हमारा बहुत बड़ा खर्च पड़ेगा, इससे सवारी का भी बन्दोबस्त अगर आप वहीं से कर देते तो अच्छा था।" क्या करे लड़की वाले ने लाचार होकर यह भी स्वीकार किया तो बरात चली। अब रईस महाशय घर

पर चाहे एक सीधा भी कभी ब्राह्मण को न देते हों किन्तु समधी के द्वार पर नित्य दस दान करने को माँगेंगे। खैर ज्योँ त्योँ करके द्वारपूजा होने लगी तो पहिला ठनगन पड़ा उससे भी छुट्टी हुई। अब दुलहा मौर नहीँ उतारता है और बत्ती नहीँ मिलाता है, खिचड़ी नहीँ खाता है, समधी माँड़ौ नहीँ हिलाता है, अब क्या किया जाय, कलेजा मसोस-मसोस करके देना ही पड़ता है। जब यह सब तै हो चुका तब एक और नया झगड़ा पड़ा। समधी का भात खाना क्या दिल्लगीबाज़ी है। ५ हजार से कम देंगे तो समधी भात हो नहीँ खायँगे, अब वह भी दिया गया। अब लड़की की विदाई के समय लड़के के बाप का संदेशा लड़की के बाप को आया कि हमारा जो कुछ कौल क़रार हो उसको पूरा कर देवेँ और हमारे पुरोहित का व नाई धोबी कहार बारी इत्यादि का हक़ दे देवेँ नहीँ लड़की हम छोड़कर चले आवेँगे। अब कोलाहल मचा। देखिये तो यह सब कुरीतियाँ कैसे अज्ञान तथा प्रबल अविद्या की हैं। यह सब रुपये का खेल है। यह किसको श्रद्धाहीन नहीँ कर देता? हाय

शोक ! कहाँ तक लिखूँ ? निदान किसी तरह लड़की की विदा हुई और माता पिता के सिर से बहुत बड़ी बलाय दूर हुई। सोचने की बात है इन्हीं सब कठिनाइयों को देख कर स्त्रियाँ गाती हैं—"गंगा पैठि बाबा विनवहिं आदित, मोरे बूते कन्या जनि होय—कन्या जनम जब देहु बिधाता, तब घर सम्पति होय।"

कभी कभी ऐसा मौक़ा भी आन पड़ता है कि दुःख में भी सुख की भावना होती है। यद्यपि दुलहिन बनने पर तरह तरह के दुःख होते हैं। दुलहिन भूखी रहती है तो भी नहीं बोलती, पाखाना पेशाब भी रोकना पड़ता है, दम साध के बैठना पड़ता है, लेकिन हिन्दू रमणियों में ऐसा शुद्ध पति-प्रेम चला आता है कि इसी एक प्रेम के लिए सब दुःखों को सुख मान कर कुशल से रहती हैं। जैसे चकवा चकई दोनों को पींजरे में बन्द कर देवे, तो दुःख तो उन्हें बहुत हुआ कि स्वतंत्रता छिन गयी, किन्तु सुख यह हुआ कि दम्पती रात-दिन साथ रहने लगे। पहले जो जो रस्में रक्खी गयीं सब सोच समझ कर किन्तु

अब उनका मतलब और तरह से लगा कर गँवार स्त्रियाँ मिल कर सत्यानाश कर रही हैँ। जब दुलहिन उतरी तो कपड़े मेँ उसको ऐसी लपेटते हैँ कि इसका ख्याल ही नहीँ रह जाता कि दुलहिन भी आदमी है, और बार बार उसका मुँह खोल कर मूरत या खिलौनोँ की तरह लोगोँ को दिखलाती रहती हैँ। सास ननद घुड़का करती हैँ कि देखना, ताकना मत। अब बेचारी नइहर मेँ तो हमेशा ताकती रही, ससु-राल मेँ जो अब आँख मूँदना पड़ा तो ऊबने लगती है। और वह बेचारी एक प्रकार का तमाशा हो जाती है। आँगन मेँ निकलना तो बहुत बदनामी का कारण है। एक दालान के अंदर जो कोठरी सबसे आड़ मेँ होती है जिसमेँ हवा और रोशनी का भी गुजर नहीँ होता, वही दुलहिन के रहने के लिए मुनासिब समझी जाती है। उसी कोठरी मेँ दुलहिन खावे और बैठी रहे। एक रसम उपटन का इतना भारी है जो दोनोँ वक्त दुलहिन के लगाया जाता है, और घर की बड़ी बूढ़ी सुयोग्या स्त्रियाँ तो कोई जाने नहीँ पातीँ, खाली दुल-हिन के पास एक नाइन जो उबटन लगाती है उसीका

बड़ा विश्वास माना जाता है। नाइन का हाल हमारी बहिनें खूब अच्छी तरह जानती होंगी कि किस लियाक़त की होती हैं। एक महीना दोनों वक्त उपटन लगाती हैं। इतने ही दिन के अंदर गाँव भर के और दुलहे के सात पुश्त का हाल बयान कर देती हैं, और नाइन को इसका क्या ख्याल कि अच्छे काम जो इस वंश में हुए हैं उसको कहे। उसको तो केवल दोष वर्णन करना है और दुलहिन भी अच्छी तरह से सब सुनती है। किन्तु यह सब कर धर के भी नाइन सफ़ाई दिये जाती है कि दुलहिन हमसे बोलती भी नहीं। इस पर भी जो कोई महल्ले वाली आयीं तो बोली, "देखना बहू के पास कोई निगोड़ी जाने न पावै नहीं तो सिखला पढ़ा कर पक्की कर देवेगी।" अब जब शाम हुई तब घर की बड़ी बूढ़ियाँ आँगन में मिल जुल कर बैठ गयीं। दुलहा बेचारा झाँक झाँक कर फिर जा रहा है। बड़ी मुश्किलों से कहीं दो एक बजे अंदर जाने का संयोग हुआ और ४ बजे दुलहे के भागने के लिए किवाड़ खटखटाये जाने लगे। बेचारा दुलहा आँख मलते, आधा सोते आधा जागते ऐसा डर के भागता

है कि मानो सवेरा हुआ नहीं कि बड़ी भारी चोरी में पकड़ा जायगा। अगर किसी दिन सवेरा हो गया या किसी के देखते हुए अंदर गया तो दुलहे को तो कोई कुछ नहीं कहता, किन्तु दुलहे की निर्लज्जता का दंड बेचारी दुलहिन के मत्थे जाता है। घर की बड़ी बूढ़ियों के इजलास में हर तरह से यम यातना होने लगती है। कोई बोली, "कहाँ की बहुत सुन्दरी हैं जो इतना बस में कर लिया है?" कोई बोली, "क्या ले के आयी हैं?" कोई बोलीं, "ज़रा भी शर्म नहीं करती," कोई बोलीं, "साँझ ही से बिछौना तैयार करने लगती हैं"। निदान जितने मुँह उतनी बातें। हज़ारों किस्म के ऐब दुलहिन में लगाये जाते हैं। अब दुलहिन बेचारी अपनी तकलीफ़ किससे कहे। किसी औरत से बोलने चालने में तो बहुत बड़ा ऐब ठहराया जाता है। यह अपने दिल का बोझ कैसे उतारती? वह अपनी सारी कहानी अपने पति के कान में इस ख़ूबसूरती से पिरोती है कि जैसे हंस मोती को चुन चुन के निगलते हैं, और उस साँसत से छुट्टी पाने के लिए कुछ झूठी कुछ सच्ची मिला कर कहती है। अब दुलहा इस ख्याल से दुलहिन की बात

किसी पर प्रकट नहीं करता है, कि और भी दुलहिन के ऊपर आफत आयेगी। दिल ही दिल में मसोस के रह जाता है और यह ख्याल करता है कि नयी नयी स्त्री घर में आ गयी है, और उसके साथ में सलूक ठीक नहीं होता है, यह सोच कर उदास रहता है, और घर में खाने पीने गया और मा बहिनें किसी काम के लिए बात चीत करने लगीं तो दुलहे के कान तो भरे हुए हैं, सब बातें याद करके माथा सिकोड़ा और झुँझला कर बोला, "चलो बस खतम करो।" अब लगी मा बहिन बकने, "जब से शादी इस की हुई तब से तो यह हमको तिनका सा भी नहीं समझता है।" अब दो चार औरतें और भी महल्ले की जुट गयीं और लगीं कहने कि "अब कलियुग की भयी पैठारी। हित भयीं मेहरी, पतित महतारी।" हमारी बहिनें विचार करें, न्याय करें कि पहिले किसका दोष है? सच पूछो दोष तो अविद्या का है, जो अविद्या माता में हुई तो लड़की और बहू में भी उसीका असर पड़ा। वही असर फिर आगे की सन्तान में पड़ा। इसलिए अगर शिक्षित माताएँ होतीं तो अपनी बहू को बहुत अच्छे ढंग पर रखतीं और आगे

को फिर वेही भलाई और उन्नति करती जातीं। ज्यों ज्यों अविद्या बढ़ती है त्यों त्यों बुराई भी बढ़ती है। इस अविद्या और परदेदारी के कारण हमारी संतान जिस बुरी रीति से पाली पोसी जाती है उसे भी लिखूँगी॥

सन्तान का पालन-पोषण

माता समान जग पालन हार कौन ?
माता समान जग को अनुराग भौन ?
सन्तान हेतु जुद्द लेखति तुच्छ मान,
है वस्तु कौन जग में जननी समान ? (पूर्ण)



गले समय में स्त्री और पुरुष दोनों की शिक्षा होती थी। दोनों साथ साथ रह कर अपने अपने अच्छे भांवों का प्रभाव एक दूसरे पर डालते थे और उनके सुसंग से उनकी सन्तान की बड़ी अच्छी तरह रक्षा और शिक्षा होती थी। बालक चाहे राजा के हों चाहे रंक के, किन्तु अत्यन्त बचपन की शिक्षा के

बाद वे गुरु से शिक्षा पाने को परदेश भेजे जाते थे। कृष्ण बलराम को शिक्षा के लिए मथुरा से उज्जयिनी जाना पड़ा और रामचन्द्र जी गुरु विश्वामित्र के संग कोसल से मिथिला गये थे। बड़े बड़े राजा रईस के कोमल अंगोँ वाले सुपुत्र भाँति भाँति के दुःख उठा कर देश देश घूमते थे और मुनियोँ के तपोवन मेँ उनके पशु चराते थे, तब जाकर वे बड़े होने पर बड़े अनुभवी, सहन-शील, वीर और विद्वान होते थे। वे शास्त्र के सिवाय शस्त्र विद्या और अनेक कलाएँ सीखते थे। कोरा पढ़ना लिखना सीख कर विद्वान नहीँ बन जाते थे और जब तक अपनी शिक्षा पूर्णतया समाप्त नहीँ कर लेते थे, तब तक वे दृढ़ता से ब्रह्म-चर्य्य का पालन करते थे। आज कल की दशा बहुत बिगड़ गयी है।

आजकल की दशा यह है कि रईस अमीर लोग अपनी कचहरी दरबार मेँ दिन बिताते हैँ और स्त्रियाँ परदे के भीतर रह कर बाहर आने जाने से रहीँ। उन को संगति सुहबत भी मिलती है तो नित्य की आने जाने वाली नीच नाइनोँ बारिनोँ और कहारिनोँ की।

इसका फल यह होता है कि बड़े घरों की गृहिणियाँ के विचार भी उनकी संगति से तंग हो जाते हैं। बच्चा जब से जनमा तब से ही इतना अधिक तेल उबटन होने लगता है कि बच्चा जन्म रोगी हो जाता है। उसका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, जैसी मैली तरह वह रक्खा जाता है उससे धीरे धीरे मैले और बेढंगेपन से रहने की आदत पड़ जाती है, फिर मैलेपन से उसे घृणा नहीं होती। मेरी राय में तेल उबटन बहुत ज्यादा करने से लाभ नहीं होता, बल्कि उसे नित्य कुनकुने पानी से नहला कर तुरन्त देह पोंछ देना चाहिए और अगर नहलाना किसी कारण से उचित न हो तो गरम पानी से रुमाल भिगो कर नित्य देह अच्छी तरह पोंछना चाहिए, यह अत्यन्त आवश्यक है। गँवारिनें सालों लड़के को नहीं नहलातीं और जब लड़का छः महीने का हुआ तब उसके मुँह में कभी मिठाई, कभी रोटी, कभी कोई चीज और कभी कोई चीज डालती रहती हैं। यहाँ तक कि कभी लड़के का मुँह खाली नहीं रहता और कुछ नहीं तो एक काठ का चट्टू मुँह में डाले ही रहता है। भला देखिये तो

सही, कि इस ढंग से लड़का कैसे आरोग्य रहेगा? बहुधा इस कुटेव का फल यह होता है कि लड़का जब बैठने लगता है तो तिनका, दाना या मिट्टी जो कुछ धरती पर गिरा पड़ा देखता है, उसीको मुँह में डालने लगता है। यह आदत अच्छी नहीं है। उसके खाने का उचित समय बाँध दिया करें और उसे बिलकुल हलके और जल्द पचने वाले भोजन दें। ऐसा न करें कि जो ही कुछ स्वादिष्ट भोजन मिले उसे ही उसके मुँह में डाल दें। बच्चे को संयम नियम से खिलाना चाहिए और हर घड़ी खाने पीने से, मुँह चलाते रहने से, बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। जब लड़का बोलने लगता है तो पहले तो निपढ़ स्त्रियाँ बच्चे को गालियाँ सिखलाती हैं और जब वह कोई अचम्भे की वस्तु देखता है और पूछता है कि अम्मा यह क्या है, तब ठीक ठीक समझा कर लड़के को निडर कर देना तो दूर रहा, ऊपर से तरह तरह की डरावनी बातें कह कर बच्चे को निपट डरपोक बना देती हैं। जैसे एक एंजिन से धुआँ निकलते हुए अज्ञान बालक ने देखा और बोला, "अम्मा यह क्या है?" मूर्खा माता

बोली, "बेटा ! भुक-भुकवा है।" अब ज्योंही लड़का रोने लगा, लगीं डराने, "आव भुक-भुकवा काट ले !" लड़के के सोने के लिए बीसों तरह की डरावनी बातें, "आ घोघर काट," "आ बन्दर नोच।" देखिये बहिनों ! अगर माताएँ पढ़ी लिखी होतीं तो ऐसी ऐसी बातें काहे को कहतीं। जब लड़का चार बरस का हुआ तो ठीक तो समझाती नहीं कि "बेटा ! अभी तुम असमर्थ हो, अकेले फिरते घूमते गिरने का डर है" बल्कि इस के बदले में यही कहने लगती हैं कि "अकेले वहाँ न जाना, वहां बड़ी भारी चुड़ैल है।" तीन तीन बरस तक तो लड़के को धोती नहीं पहनाती हैं, जिससे नहीं मालूम कितनी खराबियाँ लड़कों में पैदा हो जाती हैं। इसी तरह आठ दस बरस के अन्दर यहाँ तक कुरीतियाँ भर जाती हैं कि फिर वह उमर के साथ धीरे धीरे बढ़ने लगती हैं। जिस घड़े के अन्दर दो सेर चीनी आ सकती है, उसमें यदि आध सेर मिट्टी भर दो तो चीनी उसमें डेढ़ ही सेर अट सकेगी। यह सब हालत इसी सबब से पैदा हो जाती हैं। बिना लिखी पढ़ी माताओं के साथ में कम

से कम दस बरस तक तो लड़का रहता ही है। लड़के को नंगा न रखना चाहिए। लड़के को कभी भूत प्रेत का भय न दिलाना चाहिए और जितने प्रकार की बाजीगरी है, बाजीगरों को बुला करके, आवश्यक हो तो दो चार रुपया खर्च करके लड़कों को दिखला देना चाहिए, जिसमें लड़के को कभी यह भ्रम न हो कि बाजीगरी कोई जादू की चीज़ है। बाजीगरी या जितने तरह के खेल तमाशे लोग करते हैं, सबमें लाग है। जादू का ख्याल करके कभी धोखा नहीं उठाना चाहिए। यहाँ तक कि मिस्मरेज़िम भी लाग ही की चीज़ है, इसको भी एक तमाशा ही समझना चाहिए। लड़के को कभी अत्यन्त कोमल और आराम तलब नहीं बनाना चाहिए। चाहे ग़रीब के लड़के हों चाहे रईस के, सबको पैदल चलने की आदत लगानी चाहिये। लड़के को दौड़ना, कूदना, पैरना इत्यादि मोटे काम भी सिखलाने ज़रूरी है। लड़के के सामने कभी अपने पराये की बात न करनी चाहिए। लड़के को किसी से लड़ना झगड़ना कठोर बात बोलना बिलकुल न सिखलाना चाहिए। अकेले में छोटे बालक

को न छोड़ना चाहिए। लड़के को ऐसी बात सिखलानी चाहिए, जिससे उसके मन में सरलता आवे और अहंकार से बचा रहे। महाराज नानकशाह ने अपने बारह मासे में कहा है—

माघ बने तो बदी छोड़ि कछु नेकी कर लेना,
छोड़ो गर्व गुमान ग़रीबी हिरदय में धर लेना॥
इसी में साहेब है राज़ी,
चलना चाल ग़रीबी की तुम छोड़ अकड़ बाज़ी॥
फागुन फीके मति तुम बोलो, मीठे बचन कहो।
भला बुरा सब का सहि लेना, ग़म खाते रहना।
भरोसा सतगुरु का राखो,
होनी होय सो होय बचन तुम झूठ मति भाखो॥

मोल और महाजन

अपने अपने मतलब साधने में लोग अपने धर्म को छोड़ देते हैं, कर्त्तव्य का कुछ भी विचार नहीं करते। वकील, डाक्टर, वैद्य, हकीम सभी पेशेवाले स्वार्थ में बहुधा ऐसे सन जाते हैं कि किसी की दशा पर तनिक भी ध्यान नहीं देते। जब असमर्थ आदमी को देखते हैं, तब एक के बदले दस माँगने लगते हैं और जब उन्हें आपही कहीं ठिकाना नहीं दीखता तो चार की जगह एक भी मिले तो गनीमत समझ कर लेने को तय्यार हो जाते हैं। इस बात पर ध्यान नहीं देते कि कौन किस संकट में पड़ा हुआ है और परोपकार में कहाँ तक संसार की भलाई है। मर्द से जहाँ सौ की बात चीत करते हैं, औरतों बेचारियों से दो सौ से एक कदम नीचे नहीं हटते। पेशेवालों में बहुतेरे बड़े योग्य और धनी होते हैं, वे चाहे तो बहुत कुछ कर सकते हैं, पर यह तो नित्य की बात है कि कोई अनाथ स्त्री की सहायता में तत्पर नहीं होता।

ऐसे लायक और परोपकारी ढूंढ़े से भी नहीं मिलते जो किसी स्त्री को दीन और असमर्थ समझ कर उसका काम थोड़ा मेहनताना या फीस लेकर कर दें। द्रौपदी की सहायता जो श्री कृष्ण ने की तो द्रौपदी के पास क्या था? यही बात है कि कृष्ण जी के इस उपकार का जस आज तक चला जा रहा है। न कृष्ण जी रह गये न द्रौपदी, केवल यह जस रह गया। स्त्री जब बेबस डूबने लगती है तो पुरुष को ही उबारना चाहिए। लेकिन हिन्दुस्तान में अब ऐसे भाई नहीं हैं जो ऐसी दशा में स्त्रियों का उपकार निर्लोभ होकर करें। अपने देवर, जेठ, भाई तक साथ नहीं देते ग़ैर की कौन कहे। इस कारण से अब स्त्रियों की दशा बहुत दीन हीन हो रही? स्त्रियों को चाहिए कि समय पर विचार करें और मिथ्या रुपया व्ययन करें नहीं तो असमर्थ होने पर अपना भी पराया हो जाता है। आज कल जितने रईस लोग हैं जिनकी बुद्धि अच्छी है उपकार में रुपया खर्च करते हैं। जो लोग कि विश्व विद्यालय में रुपया दे रहे हैं उनका रुपया सदा के लिए वर्त्तमान रहेगा, परो-

पकार भी होगा, उनका सुयश भी होगा। इसका जो लाभ है हम ऐसी स्वल्पबुद्धिवाली क्या लिख सकती हैं। यह विषय तो बड़े बड़े विद्वान लोगों के लिखने से भी बाहर है। इसको खुद बुद्धिमान लोग समझ सकते हैं कि ऐसे काम में द्रव्य लगाना अच्छे खेत में बीज बोना है। और जो लोग कि झाड़, फ़ानूस, जवाहिरात, साज, सामान, नाच, रंग, थिएटर, तमाशा, दावत में धन लगा रहे हैं, उनकी होनहार बुरा है। उनका रुपया निरर्थक कामों में लगता है। हमारे हिन्दुस्तान की ख़रावी सच पूँछिये तो सब से ज़ियादा महाजन लोगों की बदौलत हो रही है, क्योंकि ये लोग चाहते हैं कि दुनियाँ में किसी के घर लक्ष्मी न रहे, बटुर के उन्हीं के यहाँ चली जावे। प्रायः इतनी बेईमानी तो और किसी जाति में या और किसी पेशेवालों में नहीं है। महाजन लोग जो चिकन दस रुपया के खर्च से बनवाते हैं उसे रईसों के हाथ तीस से कम में नहीं बेचते। जो जवाहिरात दस रुपया पर तैयार कराये जाते हैं वही ४०) पर बेचे जाते हैं। जो कोई महाजनी करते हैं उनको मुनाफ़ा लेना वाजिब है, परन्तु इतना

नहीं कि किसी का गला ही घोट डालें। वे लोग कहते हैं कि रईसों से न लें तो खावें कहाँ से ? वे यह नहीं समझते कि किसी के यहाँ रुपये पेड़ में नहीं लगे हैं। ईश्वर सबकी इज़्ज़त रक्खे। बल्कि नादान लड़की लड़कों स्त्री-पुरुषों को महाजन लोग अपनी बातों से ऐसा बस करते हैं कि उन्हें ज़रा भी दर्द नहीं आता। लेने वाली का चाहे ऋण हो जावे, परन्तु महाजन यही कहगे कि यह चीज़ निहायत अच्छी है, आपही के लिए लाया हूँ, मैं आप से बहुत हमदरदी करता हूँ कि १००) ले रहा हूँ, नहीं तो ३००) आप देंगे तो भी ऐसा माल कहीं न पावेंगे। क्या हर्ज है, आपका हमारा माभिला तो घर का है, दाम साल भर में दे दीजियेगा, अगर माल ख़राब हुआ तो मैं एक पैसा लेने का हक़दार नहीं हूँ। लीजिए, ऐसी ऐसी मीठी बातें बना कर मित्रता का सलूक करके जब उन्होंने ग्राहक को अपने काबू में कर लिया तो दो चार महीने के बाद फिर उन्हीं पर जिनको महाजन साहिब अपना मित्र कह गये थे और जिनसे घर का बर्ताव कर गये थे, नालिश कर दी। अब रईस हज़ारों जगह टकराते हैं, परन्तु महा-

जन के हृदय पर असर कहाँ ? बहिन जी ! ऐसे ऐसे नाजुक काम से सदा बचिये और ईश्वर को साक्षी देकर इस बात की प्रतिज्ञा कीजिये कि जो कुछ खरीद करना हो नक़द दाम देकर कई जगह पूछ पाँछ कर के लीजिये। जब महाजनों के धोखे की दरिया में बड़े बड़े बुद्धिमान मर्द लोग बह जाते हैं और अवसर नहीं पाते कि भ्रमर में से निकलें, तो बेचारी औरत क्या पार पावेगी ? हम लोगों को डर के मारे इस भयानक नदी के घाट से दूर भागना उचित है। महाजन लोग बाज़ हैं, रईस लोग चिड़ियाँ हैं, इनके पंजे में फँसे, तो वे बिना नोचनोच के खाये नहीं छोड़ते। हम लोग सब स्त्रियाँ मिलकर हाथ बाँध यही प्रार्थना करें कि हम बेचारियों को हर तरह असमर्थ दीन जान कर जो न ठगें, तो मानो यही एक बड़ा भारी पुण्य महाजनों के लिए होगा।

आप आप कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोय।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोय॥

———

जेवरों का शौक.

अब हम लोगों को ज़ेवरात के शौक़ से बाज़ आना चाहिए। जब ऐसी हालत थी कि हज़ार का माल ख़रीदा जाता था तो कम से कम बीस पच्चीस वर्ष के बाद आठ सौ पर तो अवश्य बिकता था। अब एक हज़ार का माल खरीदिये और एक साल के बाद बेचिये, अगर आपको तीन सौ रुपये मिल जावे तो यह भी बड़ा भाग्य समझिये। अब ऐसी ऐसी धोखे की कारीगरी फैली है कि कहीं सत्यता का नाम नहीं। अगर अब ज़ेवरात तोड़ के फिर से बनवाइए तो आग पर धरने से सब सोना काला होकर उड़ जाता है। अब नक़ली पत्थर को ऐसा साफ़ करके झलकाते हैं कि मालूम नहीं होता कि नक़ली है। असल मोती असल नगीना को पहिचानना स्त्रियों के लिए तो असम्भव ही समझिये, इनको वे लोग भी कम पहिचानते ह, जिनके पास बहुत से हीरे

ज़वाहिरात भरे हैं। इसके पहिचानने की शक्ति किसी किसी ही पुरुष या स्त्री में होती है। इससे अब जवाहिरात लेने का कुछ प्रयोजन नहीं। ११०) दाम का जो जवाहिर होगा उसको १०००) रु० या १२००) रुपये से कम को महाजन लोग नहीं बेचेंगे। जो चीज आपको बनवानी हो, अच्छा सच्चा सोना लेकर बनवा लीजिए। वह किसी वक्त काम भी आवेगा और आग पर तपाने से मालूम भी हो जायगा। जहाँ कहीं टाँकी रहती है वहाँ काला हो जाता है, बाकी जहाँ असल माल रहता है लाल हो जाता है। इसी तरह कपड़े को भी समझिये। बनारसी कमख़्वाब, तास बादला, पोत, गोटा, किनारी या बनारसी सारी जो आपने चालीस बरस पहले ख़रीदी थी, उसे मँगा के देखिये, और अब जो खरीद की हैं, उसे भी एक साल के पीछे देखिये, तो आपको खुद ही मालूम हो जावेगा। अधिक जाँच का कोई काम ही न पड़ेगा। अब तो यही चाहिये, कि आवश्यकतानुसार सामान खरीद के अपना काम चला लेवे और धोखे की चीजों में रुपया न लगावे। जो रुपया विश्व-विद्यालय या महामंडल ऐसे

कामोँ मेँ दिया जावेगा वही सदा स्थिर रहेगा और उसीको समझिये कि अपने ख़ास काम म लग रहा है। उसी मेँ परोपकार है, उसीमेँ सुयश है, वही अच्छे क्षेत्र मेँ है। और जो रुपया जवाहिरात के खरीद में या और दूसरे साज सामान में दिया जाता है, उसको निरर्थक समझिये। नहीं मालूम, ऐसा रुपया कौन से बुरे नक्षत्र मेँ जोड़ा गया था जो व्यर्थ धोखे की चीजोँ में निकल जाता है। वह रुपया बहुत शुभ योग मेँ जुटा है जो परोपकार मेँ लगता है॥

एक कहानी

किसी गृहस्थ के घर जाकर दो साधू अलख जगाने लगे। गृहस्थ अपने नौकर से बोला कि चार चार पैसे दोनोँ को दे दो। नौकर ने ऐसा ही किया और खड़ा होकर दोनोँ साधुओँ को देखता रहा। पैसा पाकर वे लोग लौटे। एक ने तो गाँजा भाँग खरीद

ली, दूसरा पैसे लिये रहा। इतने मैँ एक व्याधा दो चिड़िया पकड़े जाता था। दूसरा साधू बोला, "बेटा! ईश्वर की राह पर इसे छोड़ दे।" चिड़ीमार ने कहा, "बाबा! इन दोनोँ चिड़ियोँ को छोड़ दूँगा तो पैसे कहाँ मिलेँगे?" साधू ने कहा, "इन दोनोँ के दाम तुझे क्या मिलगे?" चिड़ीमार ने कहा, "चार पैसे।" साधू ने कहा, "बेटा, ये ले, चार पैसे मेरे पास हैँ, ले और इनको छोड़ दे। चिड़ीमार चार पैसे ले कर चला गया। साधू ने चिड़ियोँ को ले लिया और चिड़ियोँ के शरीर मेँ जो कम्पे का लासा लगा था उसे बड़े यत्न से पानी से धोकर और बिल्ली इत्यादि से बचा कर छोड़ दिया। चिड़ियाँ उड़ कर पेड़ पर बैठ गयीँ। थोड़ी देर तक तो वह भय के मारे हाँफती रहीँ, फिर उड़ गयीँ। पर उन्होँने उस साधू को पहचान रक्खा। साधू अपनी कुटी मेँ गया तो चिड़ियाँ भी साधू की कुटी पर उड़ कर जा बैठीँ। दिन भर साधू माँगने जाता और रात को आकर कुटी मेँ सो रहता। इधर चिड़ियोँ ने रोज एक मोती समुद्र से लाकर साधू की कुटी मेँ छोड़ जाने का नियम बाँध लिया। एक दिन

साधू ने देखा एक चिड़िया रोज शाम को एक मोती इस कुटी में छोड़ जाती है, तो वह अपने मन म विचारने लगा कि क्या बात है? फिर साधू को स्मरण आया कि मालूम होता है, मैं ने जो चिड़ियाँ चिड़ीमार के हाथ से बचायी थीं वही मेरा यह उपकार कर रही हैं। तब साधू ने उन मोतियों को बेच कर एक मकान बनवाया और कुछ रुपया जमा कर दिया, जिससे हज़ारों साधू संत नित्य वहाँ जाकर भोजन पाने लगे और साधू को धन्यवाद देने लगे।

नौकर साधुओं को दो आना देकर मालिक के पास आया और बोला, "महाराज! एक ने तो गाँजा भाँग खरीदी और दूसरे ने न तो कुछ खाने को लिया, न गाँजा भाँग ली। एक चिड़ीमार एक चिड़िया लिये जाता था, साधू ने उसको चारों पैसे देकर चिड़िया की जान बचा दी।" मालिक समझ कर बोला, "जिन पैसों से साधू ने गाँजा भाँग ली, वे पैसे तेरे ऊसर में पड़े, जमेंगे नहीं। जो पैसे दूसरे साधू को तू ने दिये वह जमेंगे।" नौकर को मालिक की बात सुन कर उस समय बहुत अचम्भा हुआ। कुछ रोज बाद

मालिक और नौकर दोनों शिकार खेलने उसी जंगल में आ निकले। नौकर दोनों साधुओं को वहाँ देख कर पहिचान गया और बोला, "महाराज! यही दोनों साधू हैं जिनको आपने उस दिन पैसे दिलवाये थे।" मालिक और नौकर दोनों ने साधुओं को प्रणाम किया। साधू भी उस नौकर को पहिचान गये और मालिक के साथ अपनी कुटी पर ले गये और सारा हाल कहा। नौकर ने हाथ जोड़ कर मालिक से कहा, "आप कहते थे कि दूसरे साधू को जो पैसे दिये गये थे, वह जमेंगे, सो बात अब सत्य निकली।" इस कहानी से यह बात सिद्ध होती है कि जो धन परोपकार में लगाया जावेगा, वह समय पाकर अवश्य जमेगा और जमकर अच्छे फल भी देगा। जो लोग धीरज के साथ वृक्ष रोपते हैं, कुछ दिन संतोष करने के पीछे वे फिर फल भी प्राप्त करते हैं। अगर वे चाहें कि आज ही वृक्ष रोपा जाय और आज ही फल भी पकने लगे, तो ऐसा नहीं हो सकता। फल मिलने के लिए कुछ समय अवश्य लगता है। अच्छा काम करोगे तो फल अच्छा मिलेगा। बुरे काम का फल भी बुरा होता है। जिस तरह समय आने पर अच्छे काम का

अच्छा फल भोगना पड़ता है, उसी तरह बुरे काम का फल भी समय आने पर अवश्य भोगना पड़ता है, तत्काल ही नहीं।

फल विचारि कारज करो, करो न व्यर्थ अमेल।
तिल ज्यों बारू पेरिये, कैसे निकसे तेल॥

समय क्या वस्तु है ?

समय पर फूल लगते हैं, समयपर फल लगते हैं, समय पर वे पकते हैं। समय पर सूर्य निकलते हैं, समय पर अस्त होते हैं। समय पर चन्द्रमा के दर्शन होते हैं। समय पर जाड़ा आता है, समय पर गर्मी पड़ती है। समय बलबान है। समय के बस में देवता, दैत्य, मुनि, सब रहते हैं। देखिये! जानकी जी का समय जब तक पूरा नहीं हुआ, राजा रामचन्द्र सरीखे पति पा करके भी बहुत दिनों तक लंका में उनको दुःसह दुःख भोगना पड़ा। अर्जुन के मित्र श्रीकृष्ण ऐसे दीनबन्धु, तिस पर

भी अर्जुन को नाना दुःख भोगने पड़े। जब तक समय बुरा था, श्रीकृष्ण जी भी अर्जुन की सहायता न कर सके। जब समय अच्छा आया तो श्रीकृष्ण जी सारथी हो गये, वही अर्जुन पराक्रमी हो गये। शंखचूड़ श्रीकृष्ण के ध्यान से एक रोज़ न बिचला, उसके रोज़ के दान पुण्य नित्य नेम मैं कभी कमी नहीं हुई, लेकिन समय पर उसका भी नाश हो गया। जब समय अच्छा रहता है तो शत्रु भी मित्र की करनी करने लगते ह, लक्ष्मी आप से आप घर मैं प्रवेश करती रहती हैं, बुराई भी भलाई ही सी दीखती है और जब समय बिगड़ता है तो मित्र भी शत्रु हो जाते हैं॥

एक कहानी

एक गँवार किसी राजा के ग्राम मैं बसा था। उसके यहाँ कोई स्त्री पुरुष दूसरा नहीं था, वह अकेला ही रहता था। उसकी स्त्री मर गयी थी। एक दिन उसके यहाँ एक स्त्री आयी और बोली, "मुझे तुम

अपने मकान में रहने दो।" गँवार बोला, "मेरे घर स्त्री नहीं है, मैं अकेला हूँ, इस लिए मैं तुम्हें रक्खूँगा तो लोग नहीं मालुम कैसा विचार करें।" स्त्री बोली, "जब तक तुम्हारा समय अच्छा रहेगा, तेरे घर से कहीं न जाऊँगी, जब तुम्हारा समय बुरा आवेगा, मैं चली जाऊँगी, फिर तुम्हारे घर न रहूँगी।" गँवार बोला, "क्या हमारा समय अच्छा आया है जो तू मेरे घर आयी है?" स्त्री बोली, "हाँ।" गँवार बोला, "क्या समय ऐसी चीज़ है कि हम कैसाही अनुचित करें, जब भी मेरा अनुचित उचित समझा जावेगा।" स्त्री बोली, "हाँ, इसी को तो समय कहते हैं। जब तक समय अच्छा है, तेरी बुराई भी भलाई हो जावेगी। जब समय बिगड़ेगा तो भलाई भी बुराई हो जावेगी।" गँवार बिलकुल उजड्ड था अपने मन में हंसा, और ठान ली कि प्राण जावें चाहे रहें, इस बात की परीक्षा मैं अवश्य करूँगा। एक दिन राजा साहेब कचहरी में बैठे थे, सभा ख़ूब सज के लगी थी, इतने में वह गँवार जाकर राजा साहब के दरबार में घुस गया और एक तमाचा उसने मार कर राजा साहेब की टोपी गिरा दी। सब लोगोंने

उसे पकड़ लिया। इतने मैं एक साँप उसी टोपी मैं देख पड़ा। उस साँप को देख कर सब लोग और राजा साहेब को बड़ा भारी आश्चर्य्य हुवा, और लोगों ने कहा, "महाराज ! यह आपका बड़ा हितैषी है जो आपकी टोपी इसने गिरादी; नहीं तो आपका काल इस टोपी मैं बैठा था"। राजा साहब ने कहा, "इसकी बदौलत मेरी जान बच गयी। इसको हमारे सिपाहियों मैं भरती करो। यह मनुष्य हमारे पलँग का पहरा दिया करे।" गवाँर खाने बिना तबाह था, जब उसकी नौकरी लग गयी तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसके बहुत दिन आराम और चैन से कटे। अन्त मैं एक दिन उसने फिर एक दुष्टता की। राजा साहेब बेहोश सो रहे थे। गँवार ने राजा साहेब को पलंग पर से घसीट कर कमरे के बाहर कर दिया। राजा साहेब को बहुत क्रोध आया। इतने मैं जिस कमरे मैं राजा साहेब सोते थे, उसकी एक कड़ी जो पलँग के ऊपर की थी, टूट कर गिर पड़ी, जिससे राजा साहेब का पलंग चूर चूर हो गया। इस हाल को सुन कर सब लोग उस गँवार की बड़ी प्रशंसा करने लगे और राजा साहेब ने उसे

बहुत कुछ इनाम दिया और उसका बहुत आदर करने लगे। कुछ काल ऐसे ही सुख पूर्वक बीता। एक दिन वह स्त्री बोली, "आज़ मैं जाती हूँ।" उसके रहने के लिए गँवार ने बड़ी प्रार्थना की, किन्तु वह तो सुकृति थी, समय हो जाने पर क्यों रहने लगी? गँवार के देखते देखते वह ग़ायब हो गयी। स्त्री के चले जाने पर गँवार ने बड़ा सोच किया। वह सोचने लगा कि मैं अब कोई अपराध न करूँगा तो राजा कैसे अप्रसन्न होगा? उस दिन से गँवार बहुत डर डर के और निहायत समझदारी और सचाई से काम करने और अपने जान को राजा साहेब के काम के सामने तिनका समझने लगा। एक दिन राजा साहेब शिकार खेलने को गये। वह एक पेड़ के नीचे थक कर बैठ गये और सोना चाहा। उस गँवार ने अपना कोट निकाल कर बिछा दिया, और राजा उसकी जाँघ पर सिर रख कर सो गया। गँवार बहुत ही होशियारी से पहरा देने लगा। इतने ही में एक सर्प पेड़ से लटका और राजा साहेब

की ओर चला। गँवार ने सोचा कि राजा साहेब की नींद न टूटने पावे और धीरे से मैं साँप को भी मार डालूँ। इस लिए उसने तलवार को मियान से ज्योंही बाहर निकाला, राजा साहब की नींद खुल गयी। इधर साँप भी लुप्त हो गया। राजा साहेब को उस पर सन्देह हुआ और बोले कि तुमने मेरे मारने के लिए तलवार निकाली थी। गँवार बोला, "एक सर्प था जिसको मैं चाहता था कि मारूँ और आपको नींद से न जगाऊँ।" गँवार ने सच्ची बात तो कही, पर राजा साहेब ने न माना और उसे नौकरी से छुड़ा दिया, और जो कुछ उसके पास था सब छिनवा लिया। इसी को समय का फेर कहते हैं। देखो बहिनो! स्त्री को ही ईश्वर पति पुत्र सब देता है और सौभाग्यवती कहलाती हैं और सब लोग उसे ही शादी व्याह में आग्रह से बुलाते हैं और वही सारा लेन देन करती हैं। समय सबके ऊपर है। समय रंक से राव बनावे, चाहे राव से रंक बनावे। जिसका समय बुरा आता है, उसके ऊपर दया करनी चाहिए और यह विचारना चाहिए कि समय सब के ऊपर

फेरा करेगा; हम भी इसी की बारी के एक पेड़ हैं, नहीं मालूम कब कैसी आँधी चले। इन सब बातों को सोच कर कुसमय में अपनी बहिनों की हर तरह सहायता करनी चाहिए। जो ग़रीब हों, सब बहिनें मिलकर उनकी ग़रीबी दूर करने का प्रयत्न करें। जो रोगी हों, उनके आरोग्य रहने का प्रयत्न करें। हमारी बहिनें यह न सोचें कि जब समय अच्छा आवेगा तो ईश्वर आपही करेगा और यही विचार करके कोई किसी की सहायता न करें। सोचना चाहिए कि हानि, लाभ, जीवन, मरण सब विधाता ने जीवों के कर्मानुसार रक्खा है, सो समय समय पर मनुष्य अपने किये को भोगता है। किन्तु यह भी आवश्यक बात है कि एक के उपकार को दूसरे के द्वारा ईश्वर करावे। मौत भी बिना किसी बहाने के नहीं होती और ऐश्वर्य्य भी बिना किसी प्रयत्न के नहीं मिलता। बीमारी बिना किसी दवा के अच्छी नहीं होती। पहिले के भले कर्मो के भले फल मिलते हैं, पर बहुधा औरों के ही सहारे मिलते हैं। विचार करो कि एक रोटी के लिए कितने मनुष्यों ने काम किया। खानवालों ने कच्ची धातु

निकाली, साफ़ करने वालों ने उससे लोहा निकाला, लुहार बढ़ई ने हल बनाया, किसानों ने उसे चलाया, खेत बोया, सींचा, कई महीने तक रात रात जाग कर रखवाली की। अन्त को उनके सहारे गेहूँ बाजार में आया। किसी ने मोल लिया, किसी ने साफ़ किया, किसीने आटा साना और किसीने रोटी बनायी। देखो! कितने मनुष्यों ने मेहनत की, तब कहीं यह रोटी नसीब हुई। कोई यह न समझे कि भाग्य के भरोसे बैठे रहने से कुछ हो सकता है। हमने जो परिश्रम किया, भले कर्म किये, उनके भले फल को रोटी क रूप म इतने आदमियों के परिश्रम के द्वारा हमने पाया।

सारा संसार एक शरीर के समान है और जितने प्राणी हैं, सब उसके अंग अंग हैं। सब के मिल जुल कर काम करने में ही संसार की भलाई है। अगर हमारे ही शरीर के अंग भाग्य के भरोसे बैठे रहें तो शरीर के सारे कल पुरज़े बिगड़ जायँ और जीना तक कठिन हो जाय। दाहिने हाथ में काँटा गड़े और बायाँ हाथ दाहिने को पराया समझ कर न निकाले तो क्या दाहिने हाथ को जो पीड़ा होगी वह शरीर भर में न

फैलेगी और क्या बायें हाथ को उस पीड़ा का भागी न होना पड़ेगा ? यह सारा संसार विश्व-रूप भगवान की मूर्ति है और सभी प्राणी उस विश्व-मूर्ति के अंग हैं। अगर वह विश्व-मूर्ति किसी अंग पर कृपा करना चाहेगी तो आख़िर और और अंगों से ही तो काम लेगी। इस से समझ लेना चाहिए कि अगर किसी को दुःख है, किसी को पीड़ा है, किसी को रंज है तो और लोगों का धर्म है कि उसकी सहायता करें और उसे विपत्ति के सागर से निकालने की कोशिश करें।

साधारण मनुष्यों की तो क्या कहना है, बड़े बड़े लोग जितने हो गये सब औरों की सहायता से बड़े हुए। उनकी विपत्ति के दिन भी औरों के ही सहारे कटे और दूर हुए। देखो ! श्री जानकी जी के दुःख में ईश्वर ही सहायक हुआ सही, पर तरह तरह के मनुष्यों वा महात्माओं के रूप में। वाल्मीकि के रूप में उनके दोनों लड़कों को विद्या पढ़ायी, रक्षा की और बाण विद्या सिखायी। कुंती ने कर्ण को जन्मते ही उसे सन्दूक़ में करके बहा दिया था। राधा बढ़ई ने उसे